www.thearyasamaj.org

ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार,08 दिसम्बर 2013 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 08 दिसम्बर 2013 से 14 दिसम्बर 2013

मार्गशीर्ष शु.–06 ● वि० सं०–2070 ● वर्ष 78, अंक 85, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 190 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,114 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

आर्य समाज सैक्टर-6 पंचकूला का वार्षिकोत्सव सम्पन्न हुआ

आर्य समाज, महात्मा हंसराज पब्लिक स्कूल, सैक्टर–6, पंचकूला का 16वाँ वार्षिक उत्सव एवं 101 कुण्डीय गायत्री महायज्ञ आर्य जगत् के मूर्धन्य विद्वान् आचार्य देवव्रत जी (गुरुकुल, कुरुक्षेत्र) की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। उन्होंने अपने उद्‌बोधन में वैदिक यज्ञ व शुद्ध आहार पर सरलतम ढंग से सुविचार विस्तार से रखे और यज्ञ के तीन अर्थों देव पूजा, संगतिकरण और दान पर चर्चा की और कहा कि मनुष्य को सुखी रहने के लिए हर दिन दैनिक यज्ञ करना चाहिए।

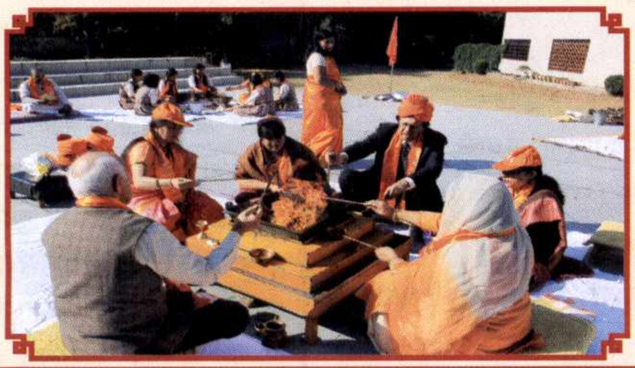

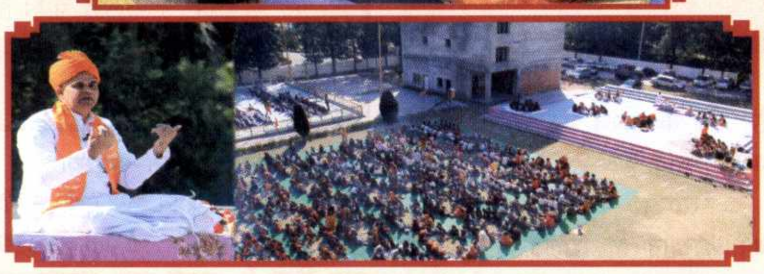

मुख्य वक्ता श्रीमान् हंसराज गन्धार जी ने अपने विचार प्रकट करते हुए सच्चे इन्सान बनने की प्रेरणा दी और कहा कि मनुष्य को प्रकृति के अनुसार जीवन व्यतीत करना चाहिए। जबसे मनुष्य प्रकृति के विरुद्ध चला तब से मनुष्य अत्यधिक परेशान है। हमारे पूर्वज वैदिक यज्ञ किया करते थे तथा प्रकृति के नियमों का पालन करने के कारण दीर्घायु हुआ करते थे। वेद का भी आदेश है **'मनुर्भव'** अथार्त मनुष्य बनो। गन्धार जी के सार–गर्भित विचार सुनकर सभी सद्‌गद् हो गये।

प्रधान श्रीमती भारद्वाज जी ने सभी श्रोताओं, बाहर से आए आर्यजनों तथा अपने सहयोगियों, विद्यार्थीगण का धन्यवाद किया। प्रसाद एवं शान्ति पाठ के साथ कार्यक्रम समाप्त हुआ।

डी.ए.वी. बहरोड़ में हुआ त्रिदिवसीय कार्यक्रम

राजस्थान–बहरोड़ स्थित डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल में ''महर्षि दयानन्द निर्वाण'' दिवस तीन दिवस तक भिन्न–भिन्न कार्यक्रमों के साथ सम्पन्न हुआ। विद्यालय के प्राचार्य राजेन्द्र गौतम ने बताया कि इस अवसर पर प्रथम दिन आर्य युवा समाज एवं लायन्स क्लब बहरोड़ के संयुक्त तत्वावधान में रक्तदान शिविर लगाया गया जिसमें 100 से अधिक लोगों ने रक्तदान किया।

दूसरे दिन विद्यालय के छात्र–छात्राओं ने बहरोड़ कस्बे में विश्व शांति रैली निकाल कर ऋषि दयानन्द के द्वारा किये गए कार्यों से जनता को अवगत कराया तथा विश्व शांति के सूत्र–'कृणवन्तो विश्वमार्यम्', 'एक ही ईश्वर की उपासना', 'सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझना', 'अपने अन्दर की समस्त बुराईयों को दूर करने का संकल्प लें' आदि नारे लिखकर जनता को विश्व में शांति स्थापित करने के तरीके बताए।

तीसरे दिन विद्यालय में यज्ञ का आयोजन रखा गया। जिसके मुख्य अतिथि श्री बलवंत यादव (समाज सेवी), विशिष्ट–अतिथि श्री कमल शर्मा, श्री मनोज शर्मा पूर्व अध्यक्ष लॉयन्स क्लब बहरोड़ श्री विष्णु आर्य पूर्व प्रधान आर्य समाज एवं वर्तमान प्रधान आर्य समाज बहरोड़ थे।

मुख्य अतिथि श्री बलवंत यादव (काका बली) समाज सेवी ने विद्यालय का मुख्य द्वार पूर्ण भव्यता के साथ बनवाने की घोषणा की।

उपरोक्त कार्यक्रमों में विद्यालय की स्थापनीय प्रबंधकर्ती समिति के सदस्य, आर्य समाज के अन्य पदाधिकारी, अभिभावक एवं अन्य गणमान्य जन उपस्थित रहे।

आर्य युवा समाज, हंसराज मॉडल स्कूल पंजाबी बाग में हुआ वैदिक-यज्ञ

आर्य युवा समाज, हंसराज मॉडल स्कूल, पंजाबी बाग नई दिल्ली के द्वारा स्वामी दयानंद सरस्वती निर्वाण दिवस मनाया गया। इस अवसर पर आर्य युवा समाज के सदस्यों ने हवन सम्पन्न किया तथा विशेष प्रातः कालीन सभा का भी आयोजन किया। विद्यार्थियों द्वारा स्वामी जी को स्मरण करते हुए भजन प्रस्तुत किए गए तथा स्वामी जी के जीवन के कई प्रेरक प्रसंग एवं उनकी दयालुता और क्षमाशीलता के अनेक प्रसगों की चर्चा की गई। प्रधानाचार्या श्रीमती रीटा राजन कुमार ने सभा को संबोधित किया। उन्होंने स्वामी जी के तप, त्याग एवं बलिदान को नमन करते हुए उन्हें श्रद्धाञ्जलि दी। प्रधानाचार्या ने विद्यार्थियों एवं अध्यापकों से अपील की कि वे स्वामी जी की शिक्षाओं और उनके आदर्शों को अपने जीवन में अपनाएँ।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – श्री पूनम सूरी

www.thearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 08 दिसम्बर, 2013 से 14 दिसम्बर, 2013

सर्वाङ्ग-सुन्दर बनें

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

सं वर्चसा पयसा सं तनूभिः, अगन्महि मनसा सं शिवेन।
त्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायो, अनु मार्ष्टु तन्वो यद् विलिष्टम्।।

यजु. २.२४

ऋषिः **वामदेवः**। देवता **त्वष्टा**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● [हम] (**वर्चसा**) ब्रह्मवर्चस से [और], (**पयसा**) दूध से, माधुर्य से, (**सम् अगन्महि**) संयुक्त हों, (**तनूभिः**) शरीरों से, (**सम्**) संयुक्त हों, (**शिवेन मनसा**) शिव मन से, (**सम्**) संयुक्त हों।, (**सुदत्रः**) शुभ दानी, (**त्वष्टा**) जगद्-रचयिता परमेश्वर, (**रायः**) [धन, चक्रवर्ती राज्य, सुख, आरोग्य आदि] ऐश्वर्यों को, (**वि-दधातु**) प्रदान करे, [और], (**यत्**) जो, (**तन्वः**) शरीर का, (**विलिष्टं**) त्रुटिपूर्ण अंग है, उसे, (**अनु मार्ष्टु**) परिमार्जित करे।

● हम चाहते हैं कि हम संसार में सर्वांग-सुन्दर बनकर रहें, षोडशकल चन्द्र के समान परिपूर्ण बनकर निवास करें। हमारे अन्दर ब्रह्मवर्चस हो, आत्मिक तेज हो, जिसके सम्बन्ध में कभी ऋषि विश्वामित्र ने कहा था कि ब्रह्म-तेज ही सच्चा बल है, अन्य बल उसके सम्मुख निःसार है। वह ब्रह्म-तेज का ही बल है, जिसके द्वारा शरीर से दुर्बल होते हुए भी अनेक मानव कोटि-कोटि जनों को अपने चरणों में झुकाते रहे हैं। साथ ही हमें 'पयः' भी प्राप्त हो। 'पयस्' शब्द दूध का वाचक होता हुआ भी रस, माधुर्य, शान्ति, निर्मलता, निश्छलता, सात्त्विकता आदि का भी द्योतक है। हमें पीने के लिए गो-रस और हृदय में बसाने के लिए उक्त माधुर्य आदि गुण प्राप्त हों। हम शरीरों से भी पुष्ट हों। हृदय में बसाने के लिए उक्त माधुर्य आदि गुण प्राप्त हों। हम शरीरों से भी पुष्ट हों। हमारे अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय तथा आनन्दमय रूपवाले पंच शरीरों का समुचित विकास हो। हमारा मन भी शिव हो, क्योंकि जब तक मन अशिवसंकल्पों से युक्त रहेगा, तब तक हमें किसी भी क्षेत्र में उत्कर्ष प्राप्त होना सम्भव नहीं है। मन को साधकर ही मनुष्य उन्नति की ओर अग्रसर होता है, और मन की जीत पर ही उसकी जीत निर्भर है, मन के हारने पर उसका हारना अवश्यम्भावी है।

'त्वष्टा' परमेश्वर सारे जगत् का तरखान है, शिल्पी है, जिसका हस्त-कौशल सम्पूर्ण विश्व में प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो रहा है। वह **'सुदत्र'** है, निरंतर सबको शुभ वस्तुओं का दान करता रहता है। वह हमें भी शुभ ऐश्वर्यों का-धन, चक्रवर्ती राज्य, सुख, आरोग्य आदि का दान करे। वह हमें भौतिक एवं आध्यात्मिक समस्त शुभ सम्पत्तियों का अधीश्वर बनादे। हमारे शरीर का कोई अंग यदि सदोष या त्रुटिपूर्ण हो गया है, तो वह कुशल शिल्पी उसे परिमार्जित, सुसंस्कृत एवं परिशुद्ध कर दे। यदि हमारे नेत्रों की दृष्टि-शक्ति मन्द हो गई है अथवा दृष्टि-शक्ति मन्द हो गई है अथवा दृष्टि-शक्ति तीव्र होते हुए भी हम उसका उपयोग अभय दृश्यों को देखने में करते हैं, तो त्वष्टा प्रभु हमारी मन्द या अपवित्र नेत्र-शक्ति को शुद्ध कर दें। इसी प्रकार श्रोत्र, मुख, नासिका आदि अन्य अंगों को भी मांजकर तीव्र-शक्तिमय एवं पवित्र कर दे। हे कलाकार त्वष्टा प्रभु! तुम हमारी तूलिका से रंग भरकर हमें सर्वांग-सुन्दर, सर्व-गुण-सम्पन्न और सर्व-शक्ति-समन्वित कर दो। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

तत्त्व-ज्ञान

● महात्मा आनन्द स्वामी

मन को निर्विषय करने की बात चल रही थी। स्वामी जी ने ध्यान लगाने के लिए मन के खेल से सावधान होने को कहा। सिद्धियों की भावनायें मन को निर्विषय नहीं होने देतीं। चित्रों द्वारा मन की एकाग्रता नहीं होती केवल मन की कल्पना मात्र रह जाती है। एकाग्रता तो तभी होगी जब मन को निर्विषय कर दिया जाय।

प्राणायाम सहित ध्यान की विधि बताते हुए उद्धव और भगवान कृष्ण का संवाद प्रस्तुत किया और बताया कि शरीर के जिस भी स्थान (नासिकाग्र भाग, भृकुटि, ललाटचक्र अथवा हृदय प्रदेश) पर ध्यान लगाएँ। इसके आगे चलकर ज्ञान के द्वारा ध्यान लगाएँ।

आगे चलकर ज्ञान के द्वारा ध्यान में प्रवेश करने की बात कही। ज्ञान के कुछ रहस्यों का भी वर्णन किया। सृष्टि रचना से लय तक जायें। सृष्टि का बनना और फिर प्रलयावस्था में जाने का दृश्य विज्ञान-ध्यान के नेत्रों से अनुभव किया जाय तो मन शान्त तथा एकाग्र, होने लगता है। यह अनुभव किया जा चुका है कि नितान्त एकान्त स्थान में सृष्टि विज्ञान को ध्यान में लाने से मन स्वयमेव लय होने लगता है।

अब आगे......

अघमर्षण मन्त्र से ध्यान-अवस्था

कई लोग पूछा करते हैं कि महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने सन्ध्या में जो तीन अघमर्षण मन्त्र लिखे हैं, उनकी क्या आवश्यकता थी? फिर इन मन्त्रों से पाप कैसे कट जाते हैं? इन मन्त्रों में सृष्टि-उत्पत्ति ही का क्रम भगवान् वेद ने बतलाया है और उपासक के हृदय पर यह अटल सत्य अंकित किया है कि सारा दृश्यमान जगत् परमात्मा ही के वश में है। उसी परमात्मा की सामर्थ्य से ऋत और सत्य उत्पन्न हुए। यह जितना सृष्टि-क्रम का नियम है, ये सारे भूतों के जो-जो गुण हैं, ये सब परमात्मा के नियमानुसार हैं। ऋत कहते हैं सृष्टि-नियम (Laws of Nature) को और सत्य कहते हैं धर्म को।

सृष्टि में जो-जो प्राकृतिक घटना हो रही है, वह सब अटल नियम के अधीन है। क्या कोई वैज्ञानिक पीपल के बीज से आम उत्पन्न करने में आज तक सफल हुआ है? जो नियम, जो मर्यादा परमात्मा ने बाँध दी है, उसे कोई लाँघ नहीं सकता। जन्म, मरण, स्थिति तथा रक्षा आदि भी सब नियमानुसार ही हो रहा है। अग्नि का धर्म जलाना है तो यह जलाएगी ही। सूर्य का धर्म उदय होना, गर्मी और प्रकाश देना है तो सूर्य ऐसा करेगा ही। जितने भी प्राकृतिक नियम या कानून हैं उनको एक मनुष्य जितना हृदयङ्गम करके उनके अनुसार या प्रतिपल आचरण करता है, उतना ही वह सुखी या दुःखी होता है। जिस प्रकार परमात्मा ने प्रकृति से बनाए सारे पदार्थों, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, इन्द्रिय, वनस्पति इत्यादि के नियम बना दिए हैं, उसी प्रकार धर्म के भी नियम बना दिए हैं। जैसे प्राकृतिक नियम अटल हैं, वैसे धर्म के नियम भी अटल हैं।

सत्य-भाषण धर्म है असत्य-भाषण अधर्म है। परहित तथा परोपकार धर्म है; परहानि, परनिन्दा, परपीड़ा अधर्म है। इसी प्रकार और अनेक नियम हैं। धर्म से मनुष्य का हृदय स्वयमेव प्रसन्न होगा और अधर्म से नीच संस्कार मन को आ घेरेंगे। यहीं से दुःख की सृष्टि प्रारंभ हो जाएगी। उपासक जब ऋत और सत्य के सम्बन्ध में विचार करता है तो वह पाप से बचने लगता है, सृष्टि-नियमों का ज्ञान प्राप्त करके उनसे लाभ उठाकर सुखी होता है, पाप तो तब अपने आप कटने लगते हैं।

फिर इन अघमर्षण मन्त्रों में परमात्मा की बड़ी भारी सामर्थ्य का वर्णन करने के लिए यह बतलाया है कि यह सारा दृश्यमान जगत् सोया पड़ा था, कुछ भी नहीं था। प्रलय की यह महारात्रि परमात्मा के संकेत ही से थी और प्रलय की उस महारात्रि में प्रभु-सामर्थ्य से फिर जागृति आने लगी। प्रकृति ने महत् का या विराट् का रूप धारण किया। विराट् से पहले की अवस्था 'एक लहराता हुआ समुद्र' (समुद्रात्, अर्णवात्) था। यह लहराता समुद्र प्रकृति की वह अवस्था है जब वह द्रवावस्था में प्रभु-सामर्थ्य में लाई गई। 'तब वर्ष उत्पन्न हुआ।' यह वर्ष हमारा 12 महीनों वाला वर्ष नहीं, अपितु इससे वह दीर्घकाल अभीष्ट है जिस लम्बे काल तक वह लहराता हुआ समुद्र-'द्रवीभूत प्रकृति' एक समिष्ट गोला बन जाता है। अंग्रेजी में इसी को 'Cyclic motion' कहा जाता है। उसके पश्चात् ये सूर्य,

www.thearyasamaj.org

चन्द्र इत्यादि फिर प्रकट हुए, वनस्पतियाँ और दूसरे सारे पदार्थ भी। इतना महान् कार्य केवल एक सीमित–सी सामर्थ्य ही से परमात्मा ने कर डाला। यह अनुभव साधक के मन को परमात्मा की महान् शक्ति का साक्षात् करा देता है; इससे मन उसी परमात्मा के विचार से बँध जाता है। संसार के शेष सारे पदार्थ साधक को तुच्छ नज़र आने लगते हैं। मन उनको परिवर्तनशील देखकर उनसे उपराम होता है और अटल रहने वाले भगवान् के विचार में टिकने लगता है। ज्ञान द्वारा ध्यान–अवस्था में पहुँचने का यह एक साधन लिखा गया है।

ओ३म् जप से ध्यान–अवस्था

एक और साधन ध्यान–अवस्था में पहुँचने के लिए है कि ओ३म् शब्द के उच्चारण और ओ३म् के नाद में अपने–आपको खो देना। उपनिषद् ने तो ओ३म् ही का ध्यान करने का आदेश किया है। वेद भगवान ने भी कर्मशील मानव को यही आज्ञा दी है कि ओ३म् का स्मरण करो। ओ३म् के नाद के सम्बन्ध में शौनकाचार्य तथा श्री सूत जी का संवाद बड़ा रहस्य उद्घाटन करता है। 'श्रीमद्भागवत' के द्वादश स्कन्ध से वह प्रकरण यहाँ दिया जाता है:

समाहितात्मना ब्रह्मन् ब्रह्मणः परमेष्ठिनः।
हृद्याकाशादभून्नादो वृत्तिरोधाद्विभाव्यते।। 37।।
यदुपासनया ब्रह्मन् योगिनो मलमात्मनः।
द्रव्यक्रियाकारकाख्यं धूत्वा यान्त्यपुनर्भवम्।। 38।।
ततोऽभूद् वृहदोङ्कारो योऽव्यक्तप्रभवः स्वराट्।
यत्तल्लिंग भगवतो ब्रह्मणः परमात्मनः।। 39।।
स्वाधाम्नो ब्रह्मणः साक्षाद्वाचकः परमात्मनः।
स सर्वमन्त्रोपनिषद् वेदबीजं सनातनम्।। 40।।

भागवत 12।6।।

'हे ब्रह्मन्! शौनक! जब परमेष्ठी ब्रह्मा ने अपनी चित्तवृत्ति का अवरोधन किया तब उसके हृदयाकाश से नाद उत्पन्न हुआ जो नाद ब्रह्मा को चित्तवृत्ति के रोकने से प्रतीत होने लगा।। 37।।

'हे ब्रह्मन्! जिसकी उपासना से योगीजन अपने सारे मल को शुद्ध करके मुक्ति को प्राप्त होते हैं ।। 38।।

वह नाद अ, उ, म् तीनों अक्षरों से युक्त 'ओ३म्' स्वरूप में प्रकट हुआ, जिसकी उत्पत्ति अव्यक्त है और जो स्वयं विराजमान है तथा भगवान् परमात्मदेव ब्रह्म का चिह्न अर्थात् नाम है।। 39।।

हे शौनक! परमात्मदेव ब्रह्म का साक्षात् वाचक 'ओ३म्' ही शब्द है। वही सर्वमन्त्र और उपनिषद् तथा वेदों का बीज है, वही सनातन है।। 40।।

ओउम का नाद ध्यान बाँधता है।

इसी प्रकार भागवत के 11 वें स्कन्ध में भी ओंकार के उच्चारण द्वारा प्राणायाम करने का आदेश दिया है:

हृद्यविच्छिन्नमोंकारं घण्टानादं बिसोर्णवत्।
प्राणेनोदीर्य तत्राथ पुनः संवेशयेत् स्वरम् ।। 34।।

भागवत 11।14।।

'हृदय में घण्टानाद के समान ओंकार का अविच्छिन्न पद्मनालवत् अखण्ड उच्चारण करे। प्राण–वायु की सहायता से बारम्बार ओ३म् का उच्चारण करके पुनः–पुनः हृदय के आभ्यन्तर गिराता जाए।'

ऐसी साधना ओ३म् शब्द द्वारा करने से क्या होता है? इसका उत्तर 11 वें स्कन्ध, अ0 14 के श्लोक में दिया है:

ध्यानेनेत्थं सुतीव्रेण युञ्जतो योगिनो मनः।
संयास्यत्याशु निर्वाणं द्रव्यज्ञानक्रियाभ्रमः।। 46।।

'इस तीव्र ध्यान से योगी का मन शीघ्र शान्ति को प्राप्त होता है और सारे सांसारिक भ्रम भी दूर हो जाते हैं।'

भागवत में ओ३म् नाद द्वारा मन को एकाग्र तथा शान्त करने की जो साधना बतलाई है, इसका अनुभव किया गया है और इसे बड़ा उपयोगी पाया गया है। इस साधना के ढंग से थोड़ा–सा हठ–योग का प्रयोग करना पड़ता है। वह इस प्रकार है कि एकान्त स्थान में निश्चिन्त बैठकर पीठ–ग्रीवा सीधी रखकर दोनों कानों को दोनों हाथों के अंगूठों से अच्छी प्रकार बन्द कर दो या मोम–मिश्रित रूई से दोनों कानों के छिद्र बन्द कर दो, मुख बन्द रखो। मन में ओ३म् का उच्चारण करते हुए नासिका से शब्द करते–करते प्राण बाहर निकालो। प्राण बाहर जा रहा हो और साथ ही प्राण में ओ३म् के शब्द की आवाज़ भी हो। पर्याप्त लम्बा उच्चारण करो। पुनः नासिका ही से प्राण अन्दर ले जाते हुए हो सके तो आवाज़ से ओ३म् का उच्चारण करो। ओ३म्–ओ३म् की ध्वनि को तब तक हृदय में ले–जाकर छोड़ दो, फिर हृदय से नाद तथा प्राण उठाकर नासिका से शब्द करते हुए ओ३म का उच्चारण करो। इस प्रकार यह क्रम जारी रखो और प्राण तथा नाद जब अन्दर जायँ तो इन्हें हृदय में जाकर रख दो। ऐसा साधन करने से एक–दो सप्ताह ही में भीतर से ओ३म् का नाद स्वयमेव स्पष्ट सुनाई देने लगता है। उस समय मन एक अद्भुत शान्ति तथा एकाग्रता का आस्वादन करने लगता है।

प्राण–स्पन्दन के निरोध से मन लय होता है और इन प्राणों का निरोध ओ३म के उच्चारण से जिस प्रकार होता है, उसका वर्णन 'योगवासिष्ठ' में किया गया है:

ओंकारोच्चारणसान्तशब्दतत्त्वानुभावनात्।
सुषुप्ते संविदो जाते प्राणस्पन्दो निरुध्यते।। 21।।

'उच्च स्वर से ओ३म् का उच्चारण होने पर सान्त में (अन्त्य में) जो शेष तुर्यमात्रा रूप शब्द–तत्त्व अनुभूत होता है, उसका अनुसन्धान करने से बाह्य विषयों के विज्ञान का (बहिर्मुख चित्त–वृत्ति का) जब अत्यन्त उपराम हो जाता है तब प्राण–वायु का स्पन्दन रुक जाता है।'

प्राण–स्पन्दन के निरोध का एक और उपाय भी गुरु वशिष्ठ ने बतलाया है:

यथाभिवाञ्छितध्यानाच्चिरमेकतयोदितात्।
एकतत्त्वधनाभ्यासात् प्राणस्पन्दो निरुध्यते।।

योगवा. उपशम प्र., स. 18 ।19।।

'चिरकाल–पर्यन्त एकाग्र रूप परिणाम को प्राप्त कर उदित हुए अभिवाञ्छित ध्यान से (जहाँ कहीं इच्छा हो उसी स्थान पर ध्यान करने से) जो एक वस्तु–स्वरूप का निरन्तर पुनः–पुनः अनुसन्धान होता है, उसी अनुसन्धान से प्राण का निरोध हो जाता है।'

ओ३म् जप से एकाग्रता और विघ्नों का नाश

'योगदर्शन' में तो अतिशीघ्र मन की एकाग्रता प्राप्त करने का सरल सीधा साधन ओ३म् का जप और ओ३म् के अर्थ का चिन्तन बतलाया है। 'योगदर्शन' के समाधिपाद में लिखा है:

तज्जपस्तदर्थभावनम्। योगदर्शन 1।28।।

'उस ओ३म् का जप और उस ओ३म् के अर्थभूत ईश्वर का पुनः–पुनः चिन्तन करना चाहिए।'

इस ओउम् का जप तथा ओउम के अर्थ–चिन्तन का फल यह लिखा है:

ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमोऽप्यन्तरायाभावश्च ।। 1। 29।।

'उक्त स्थान से विघ्नों का अभाव और आत्मा के स्वरूप का ज्ञान भी होता है।'

इतना बड़ा महत्त्व ओ३म्–जप तथा ओ३म् के अर्थो के चिन्तन का है। मन की एकाग्रता को प्राप्त करने के यत्न में जो साधक कटिबद्ध होते हैं, उनके मार्ग में नाना विघ्न भी आकर खड़े हो जाते हैं। उन्हीं विघ्नों की ओर ऊपर के सूत्र में संकेत किया गया है और इससे अगले दो सूत्रों में (30 तथा 31 में) उन 14 विघ्नों तथा दोषों का वर्णन है जो योगी को सताते हैं। वे ये हैं:

(1) व्याधि=शारीरिक रोग, (2) स्त्यान=योग–साधनों में प्रवृत्ति न होना, (3) संशय, (4) प्रमाद (5) आलस्य, (6) अविरति=वैराग्य का अभाव अर्थात् विषयों में आसक्ति, (7) भ्रान्ति–दर्शन=मिथ्या ज्ञान और ऊटपटाँग विचार, (8) अलब्ध–भूमिकत्व=साधन करने पर भी कोई स्थिति प्राप्त न होना, (9) अनस्थितत्त्व=ज्योतिदर्शन होकर ज्योति का लुप्त हो जाना, (10) दुःख=आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक दुःख (11) दौर्मनस्य=जब इच्छा की पूर्ति न हो तो मन में एक प्रकार की अशान्ति या बेचैनी हो जाना, (12) अंगमेजयत्व=शरीर के अंगों में कम्पन्न होना, (13) श्वास=भीतरी कुम्भक में विघ्न होना, (14) प्रश्वास=बाहरी कुम्भक में विघ्न होना।

ये सारे–के–सारे दोष या विक्षेप भी ओ३म के जप और परमात्मतत्त्व का चिन्तन और ध्यान करने से दूर हो जाते हैं। 'योग दर्शन' के बतलाए इस सरल, सुगम, सीधे मार्ग पर चलकर देखिए तो सही कि आपको ध्यान–अवस्था प्राप्त होती है या नहीं।

ओ३म–जप की महिमा में इतना ही कहना पर्याप्त है कि:

जपात् सिद्धर्जपात् सिद्धर्जपात् सिद्धिः पुनःपुनः।

'मन्त्र–जप सर्व सिद्धियों का अचूक मार्ग है।'

ओ३म् का जप ओ३म् का अर्थ समझते हुए जब अनन्यभाव से किया जाए तो मन की चंचलता मिटने लगती है। यह अनुभवसिद्ध तथ्य है कि जिसका स्मरण तथा जप बार–बार किया जाता है, उसके कुछ गुण उपासक में धीरे–धीरे आने लगते हैं। मनोविज्ञान के पण्डितों ने भी ये परीक्षाएँ की हैं और वे बतलाते हैं कि किसी भी बात की सूचनाएँ (Suggestion) बार–बार दुहराने से वे पुष्ट होती जाती हैं और कल्पना विश्वास के रूप में परिवर्तित होकर मनुष्य जैसा सोचता है वैसा ही हो जाता है। साधक जब ओ३म् का जप करता है और वह अन्तःकरण से अनुभव करता है कि यह ओ३म् पवित्र है, निश्चल है तो साधक के अन्दर पवित्रता आने लगती है और उसका मन अचल होने लगता है।

'ध्यानबिन्दूपनिषद्' में भी ओंकार (ओ३म् नाम) द्वारा ध्यान अवस्था में पहुँचने का विधान किया गया है:

ओंकारं यो न जानाति ब्राह्मणो न भवेत्तु सः।
प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते।। 14।।
अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत्तन्मयो भवेत्।
निवर्तन्ते क्रियाः सर्वास्तस्मिन्दृष्टे परावरे।। 15।।

'जो ओ३म् को नहीं जानता वह ब्रह्म को नहीं प्राप्त हो सकता। ओ३म् धनुष है, आत्मा स्वयं तीर है, ब्रह्म लक्ष्य है।। 15।।

जैसे एक तीरन्दाज निशाना लगाते समय तन्मय हो जाता है, उसी प्रकार ओ३म् की उपासना में तन्मय हो जाना चाहिए। ओ३म् के अतिरिक्त और कोई संकल्प–विकल्प चित्त में न आने पाए, फिर जीवात्मा ब्रह्म को प्राप्त हो जाएगा'।। 15।।

यही बात 'प्रश्नोपनिषद्' के 5वें प्रश्न में अधिक सुन्दरता से बतलाई गई है, वह प्रसंग 'प्रश्नोपनिषद्' से पढ़ना चाहिए।

इसी प्रकार 'ब्रह्मविद्योपनिषद' में ओ३म् की ध्वनि में मन को लय करने का आदेश है:

कांस्यघण्टानिनादस्तु यथा लीयति शान्तये।
ओंकारस्त तथा योज्यः शान्तये सर्वमिच्छता।। 12।।

'अभ्यास में जब अनहद शब्द प्रकट होता है तो उस अनहद शब्द में चित्त को शान्त करने वाला घड़ियाल का शब्द सुनाई देता है। इसी प्रकार ओ३म् का ध्यान करने में चित्त लगाए। ओ३म् की यह ध्वनि चित्त को अधिक शान्ति देने वाली है।

क्रमशः

www.thearyasamaj.org

सत्यार्थप्रकाश-प्रश्नोत्तरी

● धर्मपाल कपूर

प्रश्न1. सत्यार्थप्रकाश लिखने की प्रेरणा महर्षि दयानंद को किस व्यक्ति से मिली और उन्होंने इसे किस व्यक्ति से लिखवाया?

उत्तर– ''सत्यार्थप्रकाश'' लिखने की प्रेरणा महर्षि दयानन्द को राजा जयकृष्णदास जी से मिली जोकि उस समय बनारस के कलेक्टर थे और पं चन्द्रशेखर जी को भी राजाकृष्णदास जी से सत्यार्थप्रकाश लिखवाने के लिए नियुक्त किया था जोकि महाराष्ट्र के रहने वाले थे और जयकृष्णदास के कार्यालय में एक लिपिक के रूप में काम करते थे।

प्रश्न 2 महर्षि दयानंद को सत्यार्थप्रकाश लिखने के लिए कितने ग्रंथों का अध्ययन करना पड़ा था?

उत्तर– 2986 ग्रंथ।

प्रश्न3 महर्षि दयानंद ने कितने समय में सत्यार्थप्रकाश को लिखा था?

उत्तर– महर्षि दयानंद ने 12.6.1874 दिन शुक्रवार को ''सत्यार्थप्रकाश'' लिखवाना आरंभ किया था और लगभग 3 मास में इसे लिख डाला। महर्षि दयानंद ने इसे बनारस में लिखवाना आरंभ किया और इसका अधिकतर भाग उदयपुर में लिखवाया गया। पहले इस में 12 समुल्लास छपे थे क्योंकि राजा जयकृष्णदास जी ने 13वें व 14वें समुल्लासों को अंग्रेज़ों के डर से नहीं छपवाया था क्योंकि वे सरकारी कर्मचारी थे। इसके बाद ऋषि ने उदयपुर में बैठकर इसका संशोधन किया और यह महर्षि दयानंद की मृत्यु के पश्चात् 1884 ई. में छप सका।

प्रश्न4 सत्यार्थप्रकाश में कितने समुल्लास हैं और इसके कितने भाग हैं।

उत्तर– सत्यार्थप्रकाश में 14 समुल्लास हैं और इसके दो भाग हैं। एक पूर्वार्द्ध और दूसरा उत्तरार्द्ध। पूर्वार्द्ध में 10 समुल्लास हैं जिनमें वैदिक सिद्धान्तों का मंडन किया गया है और उत्तरार्द्ध में 4 समुल्लास है जिनमें वेद विरुद्ध बातों का खंडन किया गया है।

प्रश्न5 सत्यार्थप्रकाश में सब से छोटा और सब से बड़ा कौन सा समुल्लास है?

उत्तर– दूसरा और ग्यारहवाँ समुल्लास।

दूसरे समुल्लास में संतानों की शिक्षा का वर्णन है और यह भी बताया गया है कि माता-पिता एवं आचार्य ज्ञानवान एवं धार्मिक हों। केवल गणित ज्योतिष वैज्ञानिक है, न कि फलित ज्योतिष। 11वें समुल्लास में महाभारत काल के उपरांत जो भी विभिन्न पंथ इस देश में चले उनके पाखंडों का खंडन किया गया है। जैसे वाममार्ग से अश्लील समारोहों में मूर्तिपूजा आदि का खंडन किया गया है। मूर्तिपूजा के स्थान पर पंचायतन पूजा-माता-पिता, आचार्य, अतिथि, पति के लिये पत्नी और पत्नी के लिये पति पूजनीय हैं।

प्रश्न6 सत्यार्थप्रकाश में विभिन्न ग्रंथों के कितने प्रमाण उद्धृत किए गए हैं?

उत्तर– सत्यार्थप्रकाश में 290 ग्रंथो के 1886 प्रमाण उद्धृत किए गए हैं।

प्रश्न7 सत्यार्थप्रकाश में विभिन्न ग्रंथों के कितने मंत्र एवं श्लोक उद्धृत किए गए हैं?

उत्तर– 1542 मंत्र एवं श्लोक।

प्रश्न8 सत्यार्थप्रकाश के किस समुल्लास पर कई बार प्रतिबंध लगे?

उत्तर– सत्यार्थप्रकाश के चौदहवें समुल्लास पर कई बार प्रतिबंध लगे थे। जिसमें कुरान के 161 उद्धरणों को लेकर पाखण्डों का खंडन किया गया है। परन्तु आंदोलनों के बाद ये प्रतिबंध हटा दिए गए थे।

प्रश्न9 महर्षि दयानंद जी का सत्यार्थप्रकाश लिखने का क्या मुख्योद्देश्य था?

उत्तर– महर्षि दयानंद जी का सत्यार्थप्रकाश लिखने का मुख्योद्देश्य सत्य का प्रकाश करके अंधकार रूपी पाखण्डों को जीवन से भगाना था क्योंकि वे एक महान् समाज सुधारक थे। अतः वे स्वयं सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में लिखते हैं

मेरा इस ग्रंथ को बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य का प्रकाश करना है।

इसी कारण यह ग्रंथ 19वीं शताब्दी का सर्वप्रिय ग्रंथ बन गया था।

प्रश्न10 सत्यार्थप्रकाश का क्या महत्व है?

उत्तर– इस ग्रंथ के स्वाध्याय मात्र से संसार के प्रायः सभी मुख्य-मुख्य मतों एवं उनके सिद्धान्तों का परिचयात्मक ज्ञान हो जाता है। तभी डॉ. भवानी लाल भारतीय इसको ''विश्वकोष'' के नाम से पुकारते हैं। इसीलिए एक हिन्दी कवि ने इसकी महत्ता पर प्रकाश डालते हुए लिखा है–

दुनियाँ सारी घूम ली कहीं पाया नहीं प्रकाश।
दूर अँधेरा हुआ जब, पढ़ा सत्यार्थप्रकाश।।
सत्य तो यह है वेद का सार है सत्यार्थप्रकाश।।
कर रहा सत्य का विस्तार सत्यार्थप्रकाश।।
रोकता है झूठ का प्रचार सत्यार्थप्रकाश।।

अब प्रश्न उठता है कि सत्यार्थप्रकाश क्यों पढ़ें?

1. ईश्वर के सच्चे स्वरूप को जानने के लिए।
2. सन्तानों को सुशिक्षित करने के लिए।
3. अन्धविश्वास और पाखण्डों को चुनौती देने के लिए।
4. वैदिक धर्म की पुनः स्थापना के लिए।
5. गुणकर्मानुसार वर्ण व्यवस्था की स्थापना के लिए।
6. गृहस्थाश्रम के नियमों को समझने के लिए।
7. आश्रम व्यवस्था को जानने के लिए।
8. राजधर्म को जानने के लिए।
9. ईश्वर, जीव और प्रकृति के भेद को समझने के लिए।
10. जगत् की उपत्ति, स्थिति और प्रलय को समझने के लिए।
11. बन्धन और मोक्ष के विषय को जानने के लिए।
12. धर्म के सत्य स्वरूप को जानने के लिए।
13. भारतवर्ष में फैले मत-मतान्तरों में सत्य असत्य का निर्णय करने के लिए।
14. भारतीय संस्कृति को समझने के लिए।
15. युवकों में बढ़ती हुई नास्तिकता को रोकने के लिए।
16. धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक क्रान्ति के लिए।
17. विश्व में एक ही मानव धर्म को विस्तृत करने के लिए।
18. वैचारिक क्रान्ति के लिए।
19. मानव जीवन के उद्देश्य को जानने के लिए।
20. संसार के विभिन्न सम्प्रदायों की वास्तविकता को जानने के लिए।

सत्यार्थप्रकाश के 10 अत्यंत महत्वपूर्ण उद्धरण:–

पहला समुल्लास

1. ओंकार शब्द परमेश्वर का सर्वोत्तम नाम है।

चौथा समुल्लास

2. जो अपनी ही स्त्री से प्रसन्न और ऋतुगामी होता है वह गृहस्थ भी ब्रह्मचारी के सदृश है।

सातवां समुल्लास

3. ईश्वर अपने काम अर्थात् उत्पत्ति, पालन, प्रलय आदि और सब जीवों के पुण्य-पाप की यथायोग्य व्यवस्था करने में किंचित् भी सहायता नहीं लेता।

4 प्रश्न जीव स्वतंत्र है या परतंत्र?

उत्तर– अपने कर्त्तव्य कर्मों में स्वतंत्र और ईश्वर की व्यवस्था में परतंत्र है। ''स्वतंत्रः कर्ता'' यह पाणिनीय व्याकरण का सूत्र है। जो स्वतंत्र अर्थात् स्वाधीन है वही कर्त्ता है।

ग्यारहवाँ समुल्लास

5. यह आर्यावर्त्त देश ऐसा है जिसके सदृश भूगोल में दूसरा कोई देश नहीं है। इसीलिए इस भूमि का नाम स्वर्णभूमि है क्योंकि यही स्वर्णादि रत्नों को उत्पन्न करती है।

स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाशः

6. अनादि पदार्थ तीन है। एक ईश्वर, द्वितीय जीव तीसरा प्रकृति अर्थात् जगत् का कारण, इन्हीं को नित्य भी कहते हैं। जो नित्य पदार्थ है उसके गुण, कर्म स्वभाव भी नित्य हैं।

7. 'तीर्थ' जिससे दुःखसागर से पार उतरें कि जो सत्यभाषण विद्या, सत्संग, यमादि योगाभ्यास पुरुषार्थ विद्यादानादि शुभकर्म हैं उसी को तीर्थ समझता हूँ; इतर जलस्थलादि को नहीं।

8. 'संस्कार' उसको कहते हैं कि जिससे शरीर, मन और आत्मा उत्तम हों। वह निषाकादि श्मशानन्त सोलह प्रकार का है। इसको कर्त्तव्य समझता हूँ और दाह के पश्चात् मृतक के लिए कुछ भी न करना चाहिए।

9. 'प्रार्थना' अपने सामर्थ्य के उपरांत ईश्वर के संबंध से जो विज्ञान आदि प्राप्त होते हैं उनके लिये ईश्वर से याचना करना और इसका फल निरभिमान आदि होता है।

10. 'उपासना' जैसे ईश्वर के गुण कर्म, स्वभाव पवित्र हैं वैसे अपने करना, ईश्वर को सर्वव्यापक और अपने को व्याप्य जान के ईश्वर के समीप हम और हमारे समीप ईश्वर है ऐसा निश्चय योगाभ्यास से साक्षात् करना उपासना कहलाती है। इसका फल ज्ञान की उन्नति आदि है।

1135/11 पंचकूला (हरियाणा)

www.thearyasamaj.org

महर्षि का कलकत्ता शुभागमन

● खुशहालचन्द आर्य

महाराज पौष सं. 1929 तद्नुसार सन् 1872 के लाभग कलकत्ता पहुँचे। इनको यहाँ बुलाने का उद्योग श्री युत् चन्द्रशेखर सेन बैरिस्टर ने किया था। स्वामी जी के ठहरने की व्यवस्था के लिए सेन महाशय पहले देवेन्द्र नाथ जी ठाकुर के पास गए, परन्तु जब उन्होंने स्थान देने में संकोच प्रकट किया तो फिर उन्होंने श्री युत सुरेन्द्र मोहन को कहा। सुरेन्द्र मोहन स्थान देने में कुछ हिचके थे परन्तु जब सेन महाशय स्वामी जी को रेलवे स्टेशन से उनके मकान पर ही ले आए तो सुरेन्द्र मोहन ने प्रसन्नता से स्वामी जी की आवभगत की और उनको अपने प्रमोद कानन में ठहराया।

स्वामी जी के पधारने का समाचार सारे नगर में फैल गया। उनके जिज्ञासुजन सत्संग में जाने लगे। पण्डित हेमचन्द्र चक्रवर्ती एक बड़े पक्के ब्रह्मसमाजी थे। उन्होंने एक दिन स्वामी जी से पूछा कि आप जाति भेद स्वीकार करते हैं अथवा नहीं? उत्तर में महाराज ने कहा कि मनुष्य जाति और पशु जाति और पक्षी जाति आदि भेद तो प्रसिद्ध ही हैं, परन्तु अदि आपका आशय चार वर्णों से है तो वर्ण जन्म भेद से नहीं हैं, वे तो गुण–कर्म के भेद से हैं। स्वामी जी ने वर्णों के कर्मों की व्याख्या करके ऐसी रीति से समझाया कि वे पूरी तरह सन्तुष्ट हो गए।

चक्रवर्ती महाशय के पुनः पूछने पर स्वामी जी ने कहा कि ईश्वर निराकार है। उसका लक्षण सच्चिदानन्द है। उसकी उपलब्धि चिरकाल तक योगाम्यास करने से होती है। चक्रवर्ती महाशय ने स्वामी जी से योग–साधना की विधि पूछी, इसके उत्तर में स्वामी जी ने उनको उपदेश दिया कि अभ्यासी को चाहिए कि तीन घड़ी रात रहते उठ बैठे। उस समय मुँह–हाथ धोकर पद्मासन से बैठ जाए और दत्तचित होकर गायत्री का ध्यान करे। स्वामी जी ने हेमचन्द्र जी को अष्टांगयोग की विधि और गायत्री मन्त्र अर्थ सहित लिख कर दिया। आसन भी लगाकर बताया। उनके पूछने पर स्वामी जी ने अच्छी प्रकार सिद्ध कर दिखाया कि सांख्य के कर्त्ता कपिल भगवान् परम आस्तिक थे। जबकि अधिकतर लोग कपिल मुनि को नास्तिक मानते हैं।

उन दिनों श्रीयुत् केशव चन्द्र सेन यज्ञोपवीत धारण करने वाले ब्रह्म समाजियों की निन्दा किया करते थे। इसलिए हेमचन्द्र जी ने इस विषय में स्वामी जी से प्रश्न किया। स्वामी जी ने कहा कि शुभ गुणयुक्त मनुष्य को यज्ञोपवीत धारण करना उचित है। आप भी विद्वान हैं, ब्राह्मण वंशीय हैं, इसलिए यज्ञोपवीत अवश्य ही धारण कीजिए। चक्रवर्ती महाशय ने फिर जनेऊ पहन लिया और अन्य अनेक सज्जनों ने भी उनका अनुकरण करते हुए, दोबारा यज्ञोपवीत धारण कर लिए। पं. हेमचन्द्र जी स्वामी जी के अनुयायी बन गए और उनसे उपनिषद् अध्ययन करने लगे। वे स्वामी जी के साथ रहकर चिरकाल तक पढ़ते रहे। मई मास के पश्चात् फर्रुखाबाद में उनका पाठ समाप्त हुआ।

जिस समय स्वामी जी कलकत्ता आए, उस समय श्री केशवचन्द्र सेन कलकत्ता नहीं थे। वे जब आए तो महाराज से मिलने प्रमोद–कानन में गए और दर्शन करके देर तक वार्त्तालाप करते रहे। महाराज ने उनका नाम आदि कुछ भी न पूछा। केशवचन्द्र सेन जी ने वार्त्तालाप में स्वामी जी से कहा, "क्या आप कभी केशवचन्द्र सेन से भी मिले हैं?" स्वामी जी ने हँसकर कहा, "अभी मिला हूँ और आप ही केशवचन्द्र सेन हैं।" सेन महाशय ने कहा,"यह आपने कैसे जान लिया कि मैं ही केशवचन्द्र सेन हूँ? "स्वामी जी ने उत्तर दिया, "जैसी बात आपने की है ऐसी किसी दूसरे की नहीं हो सकती। स्वामी जी की ऊहा शक्ति से वे अति प्रसन्न हुए और उसी समय से उनके हृदय हें महाराज के प्रति प्रेम और आदर का भाव उत्पन्न हो गया।

एक दिन केशवचन्द्र जी ने स्वामी जी से पूछा। ''इस समय हमारे सामने बाइबिल, कुरान और वेद, इन पुस्तकों के आधार पर तीन बड़े धर्म हैं। सभी अपने को सच्चा कहते हैं। हमें कैसे ज्ञात हो कि इनमें से वास्तव में कौन सा सच्चा है। स्वामी जी ने बाइबिल और कुरान में दोष दिखाकर कहाँ "पक्षपात और इतिहासादि दोषों से विवर्जित केवल वेद ही हैं। इसलिए वैदिक धर्म ही सच्चा धर्म है।''

स्वामी जी की युक्तियाँ सुन और उनकी अपरिमित प्रतिभा का परिचय पाकर केशव चन्द्र सेन ने कहा, ''शोक है कि वेदों का अद्वितीय विद्वान अंग्रजी नहीं जानता, अन्यथा इंग्लैंड जाते समय वह मेरा इच्छानुकूल साथी होता।'' स्वामी जी ने भी हँस कर कहा, ''शोक है कि ब्रह्मसमाज का नेता संस्कृत नहीं जानता और लोगों को उस भाषा में उपदेश देता है, जिसे वे समझते ही नहीं।'' केशव चन्द्र सेन ने अंग्रेजी में एक ग्रन्थ लिखा था, उसके आरम्भ में उन्होंने एक ऐसा श्लोक रखा था जिससे ईश्वर के हाथ, पाँव आदि सिद्ध होते थे। स्वामी जी ने केशव जी को कहा कि ईश्वर जो व्यापक है, उसके ऐसे वर्णन अच्छे नहीं हैं। उन्होंने स्वामी जी का कथन स्वीकार कर लिया।

एक दिन, केशव चन्द्र जी ने स्वामी जी को कहा कि आप संस्कृत में ही बातचीत करते हैं। जो लोग संस्कृत नहीं जानते उनको पण्डित लोग कुछ और ही समझा देते हैं। इसलिए आप देश की भाषा हिन्दी में व्याख्यान देने का यत्न करें। स्वामी जी ने उनकी सम्मति को मान लिया। केशवचन्द्र जी ने स्वामी जी यह भी निवेदन किया कि अब आप सभा आदि में जाते हैं इसलिए वस्त्र धारण कर लें तो अच्छा है। महाराज ने इस प्रस्ताव को भी अनुमोदित किया। केशवचन्द्र सेन की इन दोनों बातों को स्वामी जी ने सहर्ष मान लिया। उससे स्वामी जी के सरल व निरभिमानी स्वभाव का परिचय मिलता है।

केशव चन्द्र सेन प्रतिदिन सायं श्री सत्संग में सम्मिलित होते थे। उन्होंने एक बार स्वामी जी से पुनर्जन्म और अद्वैतवाद पर प्रश्नोत्तर किए, जिनका उन्हें संतोषजनक उत्तर मिल गया। स्वामी जी ने सभ्य व्यक्ति के पूछने पर कहा कि हवन, मूर्तिपूजा नहीं है किन्तु वायुमण्डल को शुद्ध बनाए रखने की रीति है। स्वामी जी ने एक समय यह भी कहा था कि धर्म में मत–मतान्तरों को प्रमाण मानना उपयुक्त नहीं। प्रमाण में वेदों से लेकर महाभारत तक के ही ग्रन्थों को लेना चाहिए। स्वामी जी की कीर्ति नगर में इतनी अधिक फैल गई थी कि स्वामी जी के निवास स्थान के आगे गाड़ियों का ताँता लगा रहता था। सत्संग में सहस्रों मनुष्य आते थे। शत–शत मनुष्य प्रश्नोत्तर करके तृप्ति लाभ करते थे। स्वामी जी ने कलकत्ता में तीन मास निवास किया। इस बीच उनके अनेक व्याख्यान हुए जिनमें तीन व्याख्यान मुख्य हुए। वे इस प्रकार हैं।

1. पहला व्याख्यान केशवचन्द्र जी ने अपने निवास पर करवाया जो संस्कृत भाषा में हुआ। परन्तु स्वामी जी की कथन शैली इतनी सरल थी कि उनका कथन सर्व साधारण की समझ में आ गया। स्वामी के तर्क से, युक्तियों से, दृष्टान्तो से और प्रमाणों से सभी श्रोता जन प्रसन्न हो गए। पश्चिमी ज्ञान में पारंगत लोग स्वामी जी के वैज्ञानिक बल को जानकर आश्चर्य करने लगे। उनको यह स्वन्न में भी विश्वास नहीं था कि पूर्वीय दर्शन का पण्डित उनको सन्तुष्ट कर सकता है। व्याख्यान की समाप्ति पर महाराज की भूरि–भूरि प्रशंसा की गई और लोग एक अत्युत्तम प्रभाव को लेकर घरों में गए।

2. दूसरा व्याख्यान स्वामी जी का उस समय हुआ जब कलकत्ता में ब्रह्म समाज का वार्षिकोत्सव था। ब्रह्मसमाज के लोग स्वामी जी से उपदेश देने की विनती करने लगे। श्री देवेन्द्र नाथ ठाकुर ने अपने ज्येष्ठ पुत्र द्विजेन्द्र नाथ को स्वामी जी की सेवा में भेजा महोत्सव में पधारने की प्रार्थना की। जिस समय स्वामी जी उत्सव मण्डल में पधारे तो ब्रह्म समाज के मुख्य सभासदों ने उनका भक्ति–भाव से स्वागत किया। वहाँ स्वामी जी का एक प्रभावशाली उपदेश भी हुआ।

3. तीसरा व्याख्यान उनका ब्रह्म गोर के स्कूल में हुआ। यह व्याख्यान साढ़े तीन बजे आरंभ हुआ। स्वामी जी ने पहले जगत्पिता परमात्मा की स्तुति–प्रार्थना अति गंभीर भाव से की। तत्पश्चात वेदों के प्रमाणों और युक्तियों से ईश्वर की निराकारता और एकत्व सिद्ध किया। जन्म से वर्ण मानने में बहुत दोष दिखाए। महाराज ने तीन घण्टों से अधिक समय तक भाषण किया। इस बीच ईश्वर चन्द्र विद्यासागर भी स्वामी जी के पास एक दो बार आए।

तत्पश्चात स्वामी जी एक वृन्दावन व्यक्ति के साथ हुगली चले गए। वहाँ से स्वामी जी बैशाख बदी 5 सम्वत् 1930 तदनुसार सन् 1873 को प्रस्थान करके भागलपुर पधारे और यहाँ एक मास पर्यन्त नगर वासियों को अपने उपदेशों द्वारा कृतार्थ करते रहे। तत्पश्चात स्वामी जी पटना, छपरा होते हुए मिर्जापुर पहुँचे

यह लेख कलकत्ता वालों के लिए बढ़ा उपयोगी है। इसी उद्देश्य से मैंने यह लेख लिखा है। कृपया इसका लाभ उठाएँ।

180 महात्मा गांधी रोड (दो तल्ला)
कोलकत्ता 700007

www.thearyasamaj.org

गुरु और ईश्वर

● भारतेन्दु सूद

पुराने समय से हमारे वैदिक धर्म में जो सम्प्रदाय भारत वर्ष में ही जन्मे उन सब में गुरू का स्थान बहुत आदरणीय रहा है। वेदों में माता–पिता के बाद गुरू का ही स्थान है। गुरु से यह अपेक्षा की जाती है कि जो ज्ञान वह शास्त्रों से या फिर योग व आध्यात्मिक विद्याओं से प्राप्त करता है वह अपने शिष्यों व श्रद्धालुओं के साथ बाँटे। क्योंकि अक्सर सासांरिक कार्यों में व्यस्त रहते हुए आम व्यक्ति के पास शास्त्रों या फिर योग व आध्यात्मिक विद्याओं को पढने जानने का समय नहीं होता। जैसा कि हम जानते हैं गुरू संस्कृत का शब्द है। जिसका अर्थ है अन्धकार को मिटाने वाला। इसलिए सच्चा गुरू वही है जो कि सूर्य की तरह अज्ञान के अँधेरे का मिटा कर प्रकाश फैला दे।

अक्सर देखा गया है, लोग जब किसी दुविधा या मुश्किल में होते हैं , तो गुरु से यह अपेक्षा करते है कि वह उन्हें रास्ता दिखाए। जब महाभारत के युद्ध के शुरु होने से पहले, अर्जुन को मोह माया के जाल में फँसकर, यह समझ नहीं आ रहा था कि वह क्या करे, तो भगवान श्री कृष्ण ने उन्हें रास्ता दिखा कर कर्तव्य का बोध करवाया। इसी तरह महर्षि दयानन्द सरस्वती सच्चे शिव की तलाश में कई वर्ष पहाड़ों में गुफाओं में घोर जंगलों में घूमे पर सच्चे शिव को पाने का रास्ता तभी मिला जब उन्हें स्वामी विरजानन्द गुरु के रूप में मिले। यह है गुरू का अपने श्रद्धालुओं के प्रति कर्तव्य। परन्तु गुरू व श्रद्धालुओं के बीच का यह सुन्दर सम्बन्ध उस समय बिगड़ जाता है जब गुरू मिथ्या अभिमान से चूर, सोचता है कि लोग मुझे ही भगवान मान लें। इस इच्छा के वशीभूत वह अपने आपको अनुयायियों की नजरों में भगवान सिद्ध करने के लिए जादू, टोने व सिद्धियों का सहारा लेता है। आध्यात्मिकवाद द्वारा मोक्ष का रास्ता दिखाने के स्थान पर वह उन्हें भौतिकवाद व मायावाद का रास्ता दिखा कर माया के बन्धन में और जकड़ देता है। उद्देश्य तो था मोक्ष प्राप्ति और बना दिया गया भौतिक वस्तुओं के पीछे भागना। इसलिए यह बहुत आवश्यक है कि हम गुरू और ईश्वर के फर्क को समझें।

हमारे वेद व दूसरे धार्मिक ग्रन्थ यह बताते हैं कि ईश्वर एक है जो कि सारी सृष्टि, प्राणियों, फल, फूल, वनस्पित को बनाने वाला है। जब प्राणी को बनाने वाला ईश्वर है तो प्राणी ईश्वर का स्थान कैसे ले सकता है। जब हम मनुष्य को ही ईश्वर का स्थान दे देते हैं तो न केवल भूल करते हैं बल्कि बहुत बड़ा पाप भी करते हैं। इसका फल यह होता है कि हम ऐसे गलत गुरू के जाल में फँस कर धोखा खा जाते हैं और यह अक्सर होता है।

दूसरी महान गलती हम तब करते हैं जब कर्मफल के सिद्धान्त को भूल कर हम इन गुरुओं का पल्लू पकड़ते हैं। कर्मफल का सिद्धान्त यह कहता है कि हम अच्छा कर्म करेंगे तो फल अच्छा होगा, और यदि हमारा कर्म गन्दा है तो फल भी खराब होगा। खराब कर्म के फल को किसी भी गुरू की छत्रछाया कम नहीं कर सकती। हाँ यह अवश्य है कि एक अच्छा गुरु आपको ठीक रास्ते पर रखेगा ताकि आपके कर्म अच्छे ही हों। यह सोचना कि गुरु कर्म के फल को कम या ज्यादा कर देगा, कर्मफल के सिद्धान्त को चुनौती देने वाली बात है।

यह स्पष्ट है कि एक अच्छे गुरू का कर्तव्य है कि वह उसके मानने वाले अनुयाईयों को अच्छे बुरे का ज्ञान देकर ठीक रास्ते पर डाले पर यह तभी सम्भव है जब हम ठीक गुरू का चुनाव करें। ठीक गुरु वही है जो ज्ञानी, धार्मिक व विद्वान होने के साथ–साथ काम, लोभ, क्रोध, मोह व अहंकार से ऊपर उठा हुआ हो, उसका जीवन सादगी का हो, झूठ और असत्य से घृणा करता हो, चकाचौंध से दूर रहता हो, नाम व मशहूरी उसकी कमजोरी न हो।

यह स्पष्ट है कि एक अच्छे गुरु का कर्तव्य है कि वह उसके मानने वाले अनुयाईयों को अच्छे बुरे का ज्ञान देकर ठीक रास्ते पर डाले पर यह तभी सम्भव है जब हम ठीक गुरू का चुनाव करें। ठीक गुरु वही है जो ज्ञानी, धार्मिक व विद्वान होने के साथ–साथ काम, लोभ, क्रोध, मोह व अहंकार से ऊपर उठा हुआ हो, उसका जीवन सादगी का हो, झूठ और असत्य से घृणा करता हो, चकाचौंध से दूर रहता हो, नाम व मशहूरी उसकी कमजोरी न हो।

जब व्यक्ति घड़ा लेने जाता है तो उसे ठोक पीट कर देखता है। अगर ठीक लगे तभी लेता है, तो जो गुरू जीवन का मार्ग दिखाने के लिए धारण करना है उसे ठोक पीट कर देख लिया जाए तो उसमें हर्ज कैसा? महात्मा आनन्द स्वामी की पुस्तक में एक बहुत सुन्दर कहानी आती है।

एक बार सन्त दादू किसी नए स्थान पर चले गए व नगर से दूर किसी वीरान जगह पर ठहर गए। ज्यों–ज्यों लोगों को पता चला त्यों–त्यों वे उस विरान जगह पर आकर ही प्रभु भक्ति का अमृत पीने लगे।

शहर के कोतवाल को जब पता चला कि दादू नाम के सन्त आए हए हैं तो उसके मन में भी आया कि चल कर उस महात्मा के दर्शन करने चाहिए। अपने घोड़े पर चढ़कर कोतवाल महोदय दादू सन्त को मिलने चल पड़े। काफी दूर आ गए पर कोतवाल को दादू सन्त न दिखाई दिए। आगे कुछ दूर जाने पर एक दुबला पतला व्यक्ति दिखाई पड़ा जिसने केवल एक लँगाटी पहन रखी थी। वह मार्ग की झाडियों को काट कर फैंक रहा था ताकि मार्ग साफ हो जाए। कोतवाल ने उसके पास जाकर पूछा– ''अरे ओ भिखारी! तुझे पता है दादू सन्त कहाँ रहते हैं?

उस व्यक्ति ने कोतवाल की ओर देखा पर बोला नहीं। कोतवाल ने समझा यह बहरा है, चिल्लाकर बोला, अरे मूर्ख! मैं पूछता हूँ दादू कहां रहता है?''

इस बार उस व्यक्ति ने कोतवाल की तरफ देखा भी नहीं और अपना काम करता रहा।

कोतवाल को क्रोध आया। जिस चाबुक से वह घोड़े को चलाता आया था उसी से उस व्यक्ति को मारने लगा। चाबुक से उस व्यक्ति के शरीर पर निशान पड़ गए पर तब भी वह व्यक्ति न बोला। क्रोधित होकर कोतवाल ने चाबुक का डण्डा उस व्यक्ति के सिर पर दे मारा और चिल्लाकर कहा ''क्या तू हाँ नहीं में उत्तर नहीं दे सकता? परन्तु वह व्यक्ति फिर भी न बोला। उसके सिर से रक्त वह रहा था पर इसका कोतवाल पर कोई असर न था।

कोतवाल ने सोचा जो व्यक्ति इतना कुछ होने पर भी न बोला वह जरूर गूँगा बहरा और पागल है, और वह आगे निकल गया। कुछ दूर जाने पर एक और व्यक्ति मिला कोतवाल ने उस व्यक्ति को रोक कर उस से भी दादू का पता पूछा।

''आपको इसी मार्ग पर पीछे दिखाई नहीं दिए, मैं तो अभी उन से मिलकर आया हूँ। वह झाड़ियाँ काट रहे थे ताकि इस मार्ग पर आने वालों को मुश्किल न हो, उस व्यक्ति ने कहा।

कोतवाल ने आश्चर्य से मुँह फाड़कर कहा ''उस लँगोटी पहने दुबले पतले की बात तो नहीं कर रहे हो''

''हाँ, वही तो हैं महात्मा दादू। आपने शायद उनकी और ध्यान नहीं दिया'' वह व्यक्ति बोला।

कोतवाल ने जल्दी से घोड़ा मोड़ा व वापस उस व्यक्ति के पास पहुँचे जिसके शरीर पर अब भी चाबुक के चिन्ह थे और सिर पर पट्टी बाँध ली थी। ''क्या आप ही सन्त दादू हैं?'' कोतवाल बोला।

वह व्यक्ति मुस्कराया व कोतवाल को देख कर धीमे से बोला ''इस शरीर को दादू भी कहते हैं।''

कोतवाल जल्दी से घोड़े से उतरा, उनके पैरों से गिर पड़ा। दुखः भरी आवाज में बोला ''क्षमा कर दो महाराज! मैं तो आपको गुरू धारण करने आया था''। दादू ने उसे प्यार से उठाया और बोले ''तो फिर यह दुख किस लिए? व्यक्ति जब घड़ा लेने जाता है तो उसे ठोक पीट कर देखता है अगर ठीक लगे तभी लेता है तो जो गुरू जीवन मार्ग दिखाने के लिए धारण करना है उसे ठोक पीट कर देख लिया तो उसमें हर्ज कैसा? थोड़ी देर बैठो। मैं यह झाड़ी परे फैंक लूँ, फिर बैठकर बातें करेंगे। ये झाड़ियाँ और अनके काटे मार्ग चलने वालों का बहुत कष्ट देते हैं।

जिस व्यक्ति में तप, तयाग, धैर्य, सहनशीलता, सेवाभाव, सन्तोष, विनम्रता जैस गुण हों। जिसे लोभ, अंहकार क्रोध व मोह छूने न पाए और सब से बड़ी बात जिसका आचरण ही सदेश देता हो, उसे ही गुरू धारण करें। अगर ऐसा व्यक्ति नहीं मिलता है तो अच्छी पुस्तकों को ही गुरू मानकर उनका स्वाध्याय करें। गुरू गोविन्द साहब ने इसीलिए गुरुग्रन्थ साहब को ही अन्तिम गुरू मानने का आदेश दिया।

कहते हैं एक बार स्वामी दयानन्द सरस्वती लाहोर में जब एक आर्य समाज में पहुंचे तो हवन हो रहा था। स्वामी जी को देखते ही सभी आदर भाव से अपनी जगह पर खड़े हो गए। स्वामी जी ने सब को बिठा दिया व हवन जारी रखने को कहा। हवन खत्म हो गया तो स्वामी जी ने सब को सम्बोदित करते हुए बोले–जब आप उस सृष्टि के रचयिता की भक्ति में लीन हैं, तो मैं तो क्या, चाहे कोई राजा ही क्यों न आए, आपको अपनी भक्ति को छोड़ना नहीं चाहिए। चाहे मैं हूँ या कोई राजा, उसको बनाने वाला वह प्रभु ही है। हम उस प्रभु से अधिक सम्मान के हकदार कैसे हो सकते है। ऐसा व्यक्ति जब गुरू में मिल जाये तो जीवन का सही रास्ता अवश्य मिलेगा।

एक बात का सदैव खयाल रखें –कोई व्यक्ति कितना भी ज्ञानी है पर अगर अपनी जरूरत के लिए धन होने के बावजूद भी दक्षिणा व धन की इच्छा करता है और माँगता है तो वह गुरू बनने लायक नहीं । इस बात का पता आपको थोड़े समय में लग सकता है।

231/45-I, चण्डीगढ़

देश रक्षार्थ विषपान करने वाली राजकुमारी

● डा. अशोक आर्य

देश में मेवाड ही एक ऐसा भाग रहा है, जिसने सदा विदेशियों से लोहा लेने के लिए एक लम्बी लड़ाई लड़ी है। इस लडाई को इस मेवाड ने जहाँ प्रताप जैसे प्रणवीर, राजसिंह जैसे राजनीतिज्ञ तथा पद्मिनी जैसी पतिव्रता स्त्रियाँ दी हैं, वहां कृषणकुमारी जैसी दूरदर्शी व देश रक्षक महिलाएँ भी दीं, जिन्होंने देश के लिए हँसते हँसते अपने जीवन का अपने ही हाथों बलिदान कर दिया।

राणा भीमसिंह के यहाँ 1792 ईस्वी में एक बालिका का जन्म हुआ। रुप लावण्य की खान इस कन्या का नाम कृष्ण कुमारी रखा गया। वह बडी ही मनमोहिनी, मृदुभाषिणी तथा मराल गति वाली थी। उसका अलौकिक सौन्दर्य सब को आकर्षित करने वाला था तथा उसकी सुन्दरता की चर्चा सर्वत्र थी।

यौवन की अवस्था में इसका रुप और भी निखर गया। राणा भीमसिंह ने अपनी इस दुलारी का सम्बन्ध जोधपुर के राजा से निश्चित कर दिया किन्तु होनी को कौन टाल सकता है। अकस्मात जोधपुर के राजा का देहावसान हो गया। जोधपुर के राजा के देहावसान ने राणा भीमसिंह को विचलित कर दिया। बेटी के सम्बन्ध के लिए उनकी चिन्ता से वह चिन्तित रहने लगे। इस चिन्ता में डूबे भीमसिंह को एक सहारा मिल गया तथा उन्होंने अपनी इस राजकुमारी का विवाह जयपुर नरेश जगतसिंह से निश्चित कर दिया।

इधर राजकुमारी का विवाह जयपुर नरेश से तय हुआ और उधर जोधपुर की गद्दी पर राजा मानसिंह विराजमान हुए। गद्दी पर बैठते ही उन्होंने कृष्ण कुमारी का विवाह जयपुर नरेश से रुकवा कर स्वयं अपने साथ करने की ठान ली। अब राणा भीमसिंह के सामने एक विकट समस्या आ खड़ी हुई क्योंकि राणा भीमसिंह ने स्वयं कृष्ण कुमारी का विवाह पूर्व जोधपुर नरेश के साथ निश्चित किया था। इस कारण वहाँ के नए राजा चाहते हैं कि पूर्व नियोजन के अनुसार उसका विवाह जोधपुर के राज परिवार में ही हो तथा इसके लिए उसका विवाह मानसिंह से ही होना चाहिए, जो वर्तमान मे वहाँ के शासक हैं।

इस अवस्था में भीमसिंह मानो किसी भँवर में फँस गए हों, वह कोई निर्णय नहीं ले पा रहे थे कि वह क्या करें? इस मध्य दोनों राजाओं की और से इन पर निरन्तर दवाब बनाया जा रहा था कि राजकुमारी का विवाह उनके साथ कर दिया जाए। राणा भीमसिंह मामले को निरन्तर लटकाते चले आ रहे थे ताकि कोई समाधान निकाला जा सके। किन्तु आन पर अटल कभी प्रतीक्षा नहीं करते। (जिस सेना को विदेशियों से युद्ध करके उन्हें सबक सिखाना चाहिए था, उन सेनाओं ने अपने ही देश के भाईयों को काटने की तैयारी कर ली, यही इस देश के पतन का कारण बना। यदि समय रहते यह सब व्यक्तिगत द्वेष को भुला कर, मिलकर विदेशी शत्रु से लोहा लेते तो इस देश में शत्रु कभी पैर न पसार पाता), इस आक्रमण से मेवाड तार तार हो गया। मेवाड की सत्ता अस्त व्यस्त हो गई।

मेवाड पर दोनों ने आक्रमण तो कर दिया किन्तु क्या अकेले भीमसिंह के पास इस समस्या का कोई समाधान था? नहीं! भीमसिंह की इस समस्या का समाधान मानसिंह तथा जगतसिंह के साथ भी बँधा था। यदि यह तीनों मिल बैठकर कोई समाधान निकालने का प्रयास करते तो कुछ समाधान हो जाता किन्तु मानसिंह और जगतसिंह को तो अपना अहम ही खाए जा रहा था। मिलजुल कर समाधान का तो कोई प्रश्न ही न था। परिणाम स्वरुप मेवाड को तहस नहस करने के पश्चात पर्वत के शिखरों पर लड़ रहे ये दोनों भी आमने सामने हो गए। दोनों में भारी युद्ध हुआ और इस युद्ध में जोधपुर के राजा पराजित हुए, लेकिन फिर भी राजा जगत सिंह ने उसका पीछा नहीं छोडा। वह जोधपुर जा पहुंचे और निरन्तर छः महीने तक जोधपुर की घेराबन्दी कर रखी। ठीक छः महीने बाद वे जयपुर लौटे।

राजा मानसिंह ने देखा कि अब जयपुर की सेनाएँ लौट रही हैं तो उसने इसे स्वर्णिम अवसर समझते हुए जयपुर की सेनाओं पर पीछे से एक विशाल सेना की सहायता से आक्रमण कर दिया। जगतसिंह इस आकस्मिक आक्रमण के लिए तैयार नहीं थे। जब तक वह सँभलते, तब तक उनकी सेना इधर–उधर भाग चुकी थी तथा वह पराजित हो चुके थे। अब मानसिंह को कृष्ण कुमारी से विवाह के लिए मार्ग साफ दिखाई देने लगा तथा वह इस विवाह के लिए मेवाड़ क्षेत्र में उपद्रव करने लगे। उसने अपने साथ अम्मीर खां पिण्डारकी को भी ले लिया। इससे उसकी शक्ति भी पहले की अपेक्षा बढ़ गई। दूसरी और अवस्था यह बन चुकी थी कि राजा भीमसिंह अपनी कन्या का विवाह अब मानसिंह के साथ करने को तैयार नहीं हो रहे थे। इसलिए यह झगड़ा बढ़ गया तथा काफी समय तक चलता रहा।

इस गरल पान की घटना को सुनकर समग्र मेवाड़ में इस राजकुमारी के लिए लोगों में सम्मान बढ़ गया। सब के मुख से यही निकल रहा था कि ''राजकुमारी! तूने गरल नहीं, सुधा–पान किया था, जिसके प्रताप से तू आज अमर है। तेरा यश आज सारे संसार में फैल रहा है। तेरा स्थान इतिहास के पन्नों में आज ऊँचा है। जो शिक्षा तूने मर्त्यलोक की अबलाओं को दी है वह स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है।

इस झगड़े ने राणा भीमसिंह की चिन्ता और भी बढ़ा दी क्योंकि इस झगड़े के कारण वह अपनी बेटी का विवाह कहीं भी नहीं कर पा रहे थे। इसके साथ ही साथ राजप्रबन्ध में भी दिन प्रतिदिन शिथिलता आ रही थी। इधर प्रजा का यह हाल था कि वह भी रोज रोज होने वाले युद्धों तथा राज्य की कुव्यवस्था से परेशान थी। इसलिए भीमसिंह जानते थे कि जितना जल्दी यह झगड़ा समाप्त हो, उतना ही मेवाड़ के हित में है किन्तु उन्हें कोई मार्ग नहीं मिल रहा था।

राणा भीमसिंह के सम्बन्धी जीवनदास के मन में राजकुमारी का अन्त कर इस समस्या का समाधान करने का विचार आया किन्तु वह इतना साहस नहीं कर सके कि राजकुमारी का अन्त कर सकें। प्रजा बेहाल हो रही थी तो इसका समाधान राजकुमारी ने स्वयं ही खोज लिया। उसने स्वयं ही अपनी जीवन लीला समाप्त करने का निर्णय लिया। अपने निर्णय पर अटल हो उसने अपनी माता व बहिनों आदि से आशीर्वाद लिया तथा प्रभु से प्रार्थना की कि वह फ़िर से मेवाड में जन्म लेकर मेवाड की सेवा करे। प्रभु से इस प्रकार की प्रार्थना करने के पश्चात इस वीरबाला ने विष का प्याला अपने हाथ में लिया तथा तत्काल इसे गले से नीचे उतार लिया। जिस कन्या के लिए इतने दिनों से लड़ाईयाँ हो रही थीं, जिस कन्या को पाने के लिए हजारों योद्धा रणभूमि में अपना सब कुछ बलि के हाथ में सौंप चुके थे, वह कब इस संसार को छोड़ कर चली गई किसी को पता भी न चला।

इस गरल पान की घटना को सुनकर समग्र मेवाड़ में इस राजकुमारी के लिए लोगों में सम्मान बढ़ गया। सब के मुख से यही निकल रहा था कि ''राजकुमारी! तूने गरल नहीं, सुधा–पान किया था, जिसके प्रताप से तू आज अमर है। तेरा यश आज सारे संसार में फैल रहा है। तेरा स्थान इतिहास के पन्नों में आज ऊँचा है। जो शिक्षा तूने मर्त्यलोक की अबलाओं को दी है वह स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है।

104 – शिप्रा अपार्टमेन्ट,
कौशाम्बी 201010 गाजियाबाद
दूरभाष– 01202773400, 09718528068

आर्यसमाज भरथना (इटावा) के वार्षिकोत्सव में 65 यजमान दम्पतियों ने की पूर्णाहुति

आर्य समाज भरथना का 10 वां वार्षिकोत्सव हर्षोल्लास के साथ संपन्न हुआ। इस उत्सव में वेद कथा का पंचदिवसीय कार्यक्रम रखा गया था। यज्ञ के ब्रह्मा व मुख्य वक्ता होशंगाबाद मध्य प्रदेश के आचार्य आनंद पुरुषार्थी थे जिन्होंने अलग सत्रों में वेद मन्त्रों तथा ऋषि ग्रंथो के आधार पर वैदिक सिद्धांतों का प्रतिपादन किया। 15 किलोमिटर दूर नवोदय के लगभग प्रबद्ध 550 छात्र छात्राओं (जिनमे कुछ छात्र कश्मीर के भी हैं) के बीच उपदेश का विशेष कार्यक्रम रखा गया। अंतिम दिन 20 यज्ञ वेदियों पर 65 यजमान दम्पतियों द्वारा पूर्णाहुति का अभूतपूर्व दृश्य था। रात्रि में 12 बजे तक धर्म जिज्ञासु जन बैठे रहकर पूरा प्रवचन सुनते थे। नगर पालिका की अध्यक्षाता श्रीमती रंजना यादव जी अपने पतिदेव श्री अजय यादव जी के साथ एक दिन यज्ञ में उपस्थित रहीं। कार्यक्रम में स्वामी प्रभुवेश जी (औरैया), आचार्य श्री राजदेव जी, पंडित संदीप वैदिक जी, श्रीमती क्षमा पुरवार जी आदि विद्वान महानुभावों के उपदेश जनता जनार्दन को सुनने को मिले। अंत में आर्यसमाज की प्रधाना माता जी श्रीमती सीतादेवी आर्या जी ने सबका धन्यवाद किया।

www.thearyasamaj.org

वेद आज भी प्रासंगिक, उपादेय एवं अपरिहार्य हैं

● मनमोहन कुमार आर्य

वेद मानवजाति का सर्वस्व हैं परन्तु हमारा हतभाग्य है कि आज हम वेदों से पूरी तरह से परिचित नहीं हैं। ईश्वर व जीवात्मा सृष्टि में चेतन तत्त्व हैं तथा प्रकृति जड़ तत्त्व है। चेतन तत्त्व, ईश्वर और जीवात्मा, का गुण इनमें ज्ञान व क्रिया का होना है। जड़ पदार्थों में क्रिया व किसी उपयोगी परिवर्तन के लिए चेतन तत्त्व की प्रेरणा की आवश्यकता होती है। जड़ पदार्थों में स्वतः बुद्धिपूर्वक परिवर्तन असम्भव है। वेद शब्द का अर्थ ज्ञान है। यह दोनों शब्द एक दूसरे के पर्यायवाची हैं। वेदों का अभिप्राय है कि वेद समस्त ज्ञान का भण्डार हैं एवं उसकी चार संहिताएं है जो प्राचीन ऋषियों ने लिपिबद्ध कर पुस्तक के रूप में सुरक्षित की हुई हैं। **वेदों की उत्पत्ति कैसे हुई, यह स्वाभाविक प्रश्न है। इस पर विचार करने पर ज्ञात होता है कि वेद में जो ज्ञान है, उसकी उत्पत्ति व रचना मनुष्यों से नहीं हो सकती। अतः यह अपौरूषेय ज्ञान है जिसकी उत्पत्ति मनुष्यों से भिन्न सत्ता ईश्वर के द्वारा हुई है।** मनुष्यों को ज्ञान की उत्पत्ति के लिए सर्वप्रथम भाषा की आवश्यकता होती है। भाषा अक्षरों व शब्दों से बनती है। अक्षरों में ध्वनियाँ होती हैं। अनेक ध्वनियों में से प्रत्येक स्वतन्त्र ध्वनि को जानकर उसके लिए एक अक्षर निर्धारित करना होता है। प्रथम भाषा बनाने का यह कार्य एक मनुष्य व मनुष्यों के समूह द्वारा कदापि नहीं हो सकता। **अतः सृष्टि की प्रथम भाषा भी अपौरूषेय अर्थात् ईश्वर से प्राप्त होती है।** विदेशी लोग इस तथ्य को इस कारण स्वीकार नहीं करते कि यह ईश्वर से भाषा की उत्पत्ति का सिद्धान्त उनके धर्मग्रन्थ की मान्यताओं के विपरीत पड़ता है और अपने धर्म को येन–केन–प्रकारेण सत्य मानना व रक्षा करना उनका कर्तव्य रहा है, जो कि सत्य के विपरीत होने से उचित नहीं है। संसार में सम्प्रति जितनी भी भाषाएं हैं वे सब वेदों की भाषा के विकार हैं जिसमें **संस्कृत भाषा वेदों की वैदिक भाषा के सर्वाधिक निकट है। इस विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि सृष्टि के आरम्भ में मनुष्य को भाषा के रूप में वेदों की भाषा भी ईश्वर से प्राप्त हुई थी। वेद इस संसार को बनाने वाले ईश्वर द्वारा आदि मनुष्यों को दिया गया वह ज्ञान है जिसमें ज्ञान, कर्म, उपासना व विज्ञान विषय सम्मिलित हैं।** यदि ईश्वर भाषा व वेदों का ज्ञान न देता तो मनुष्य आज भी अज्ञानी व भाषा से रहित होता। वेदों का ज्ञान प्राप्त हो जाने पर मनुष्य अपनी बुद्धि का विकास कर सकता है और फिर वह विज्ञान की ऊँचाईयों को छू सकता है, जैसा कि आजकल हो रहा है। वेदों की उत्पत्ति का क्रम इस प्रकार रहा कि सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर ने अमैथुनी सृष्टि कर बड़ी संख्या में युवा स्त्रियों व पुरूषों को उत्पन्न किया। इनमें सर्वाधिक पवित्र व श्रेष्ठ चार ऋषियों, अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को उनकी आत्माओं में (जीवस्थ–सर्वव्यापक–सर्वान्तर्यामी–आत्मा से भी सूक्ष्म होने के कारण उसके भीतर स्थित व्यापक स्वरूप से) क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद का ज्ञान दिया। इन चार ऋषियों ने, ईश्वरीय प्रेरणा से, यह ज्ञान एक–एक करके अन्य ऋषि 'ब्रह्मा जी' को कराया। ब्रह्मा जी से पठन–पाठन की परम्परा आरम्भ हुई और उन्होंने अन्य सभी स्त्री व पुरूषों को वेदों का ज्ञान दिया। इस प्रकार से वेदों का ज्ञान पीढ़ी दर पीढ़ी चलकर अद्यावधि सुरक्षित है।

वेदों में वर्णित विषयों का उल्लेख पहले किया गया है। वेदों के मुख्य विषय ऋग्वेद में तिनके से लेकर ईश्वर पर्यन्त पदार्थों का ज्ञान है। इसी प्रकार यजुर्वेद में कर्म व यज्ञ आदि का, सामवेद में ईश्वर की उपासना का तथा अथर्ववेद में विज्ञान आदि का वर्णन है। वस्तुतः वेदों में बीज रूप में सभी सत्य विद्याएं विद्यमान हैं। वेदों के अनुसार ही सारी दुनियां में गणित के शून्य से 9 तक के अंक, गिनती, पहाड़े, सप्ताह के सात दिन व वर्ष में बारह महीने आदि का एक जैसा ज्ञान फैला व अद्यावधि प्रयोग में लाया जा रहा है। वेदों में कृषि, अन्न, फल, गोदुग्ध आदि आहार, शिक्षा, वर्षा, वस्त्र, रथ, गाड़ी, पथ मार्ग व सड़कों, जल या समुद्रयान, नौका, विमान, विद्युत, रक्षासामग्री व हथियार, देश की सुरक्षा आदि का भी ज्ञान है व इनका अनेकों स्थानों पर प्रयोग किया गया है। वेदाध्ययन कर इन व अन्य–अन्य विज्ञान विषयों का अनुसंधान कर इन विद्याओं का विस्तार किया जा सकता है और नाना प्रकार के उपयोग की सामग्री, यन्त्र–संयंत्र, उपकरण तथा मशीनरी आदि बनाई जा सकती हैं। कम्प्यूटर भी एक प्रकार से आधुनिक मशीन है। जिसमें विद्युत, गणितविद्या, पदार्थविद्या, शब्द व ध्वनिविद्या, दृश्यविज्ञान आदि नाना विकसित विद्याओं का उपयोग किया गया है। यह पहले भी किया जा सकता था। सम्भावना है कि महाभारत युद्ध से पूर्व यह सब ज्ञान रहा होगा। आज ये वस्तुएँ हमें पश्चिम के वैज्ञानिकों द्वारा प्राप्त हुई हैं तो इसका कारण है कि उन्होंने इन विषयों पर वैज्ञानिक चिन्तन किया और श्रम व तप भी किया। जिसका परिणाम ये वैज्ञानिक सुख–सुविधा की वस्तुओं की उपलब्धियाँ हैं। विज्ञान की संवृद्धि एवं समस्त खोजों का कुछ श्रेय विश्व की आदि भाषा, वेद–वैदिक–भाषा को भी है जो अपभ्रंशों, विकारों, परिवर्तनों के साथ सारे विश्व में फैली और उन–उन देशों में एक नई परिवर्तित भाषा के रूप में अस्तित्व में आई। जिसमें चिन्तन व विचार कर हमारे पश्चिमी देशों के वैज्ञानिक विचारकों ने विज्ञान की खोजें सम्पन्न की हैं। यदि प्राचीन वैदिक भाषा न उत्पन्न हुई होती तो अनुसंधान का कार्य सम्भव ही नहीं था। विदेशियों ने हमारे साहित्य से भी प्रेरणा ग्रहण कर अनुसंधान कार्य कर विज्ञान को आधुनिक स्थिति तक पहुँचाया है। दूसरी ओर हमारे अपने देश के अल्पज्ञानी लोगों ने महाभारत के भीषण महायुद्ध के बाद उत्पन्न अव्यवस्था के कारण अपने स्वार्थों की पूर्ति व अकर्मण्यता में जीवन व्यतीत किया। ज्ञान का विकास न कर अज्ञान व अन्धविश्वास तथा कुरीतियों को अपनाया जिसके कारण हम दुनियां में पिछड़ गए। विदेशी विद्वानों व वैज्ञानिकों ने विचार, चिन्तन, अध्ययन–अध्यापन, अनुसंधान व बौद्धिक विकास के जो कार्य किए हैं, उस कारण से सारा संसार लाभान्वित हो रहा है, उससे वह सारी दुनियां के लिए वंदनीय, अनुकरणीय एवं प्रशंसा के पात्र हैं। सारी दुनियां के धार्मिक व मजहबी लोगों का अनुकरण कर अज्ञान, अन्धविश्वास, कुरीतियों को छोड़ कर सत्य–ज्ञान, सत्य–कर्म व सत्य उपासना को अपनाना चाहिए, उसी से सबका कल्याण होगा, यही वेदों का सन्देश भी है।

क्या वेद आज के समय में प्रासंगिक हैं? इसका उत्तर हमें हाँ में मिलता है कि वेद एवं इनका ज्ञान आज भी और सृष्टि के अन्त तक प्रासंगिक, उपयोगी एवं अपरिहार्य रहेगा। वेद बताते हैं कि हमारे जीवन का उद्देश्य केवल सुख आदि भोगों को भोगना ही नहीं अपितु मर्यादाओं के अन्दर भोगों को भोगते हुए यज्ञ आदि श्रेष्ठ कर्मों को करना व सत्य के आचरण द्वारा प्राणी मात्र का हित करना है। **वेद हमें जीवन जीने की सर्वांगीण वैज्ञानिक पद्धति देते हैं जो दुनियां के किसी मत, सम्प्रदाय, मजहब व धार्मिक संगठन के पास नहीं है। वेद का एक सन्देश है कि 'हे मानव, तू मानव बन और श्रेष्ठ व दिव्य सन्तान व प्रजाओं को उत्पन्न कर।'** श्रेष्ठ व दिव्य जनों को सन्तान के रूप में भी उत्पन्न करने के लिए वैदिक संस्कारों की आवश्यकता है। आधुनिक ज्ञान–विज्ञान के पास सन्तानों व प्रजा को श्रेष्ठ व दिव्य बनाने का समाधान नहीं है और न किसी मत–मजहब के पास। इसके अतिरिक्त अशिक्षित, असंस्कारित व अज्ञानियों को ज्ञान, शिक्षा तथा व्रत पालन से उपयोगी बनाया जा सकता है। वेदों का सन्देश सार्वकालिक एव सार्वदेशिक स्तर पर आचरणीय एवं पालनीय है। मानव बनने का तात्पर्य हममें ज्ञान व विद्या की पराकाष्ठा और अज्ञान का स्तर शून्य प्रायः होना चाहिए। **वेदों के वर्तमान युग के सबसे बड़े विद्वान महर्षि दयानन्द ने एक बहुत ही स्वर्णिम नियम दिया है कि सभी मनुष्यों को अविद्या का नाश तथा विद्या की वृद्धि करनी चाहिए। इसी प्रकार एक अन्य स्वर्णिम नियम है कि सत्य के ग्रहण करने व असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए। वेदों का एक सिद्धान्त यह भी है कि सभी मनुष्यों को केवल अपनी उन्नति में ही सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिए अपितु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।** आज दुःख इस बात का है कि यथार्थ कर्म–फल सिद्धान्त का किसी को ज्ञान ही नहीं है। मोक्ष व अपवर्ग को भूलकर लोग अच्छे व बुरे व अमर्यादित कार्यों से धन संग्रह में लगे हैं। **बिना यह विचारे कि इसका भावी परिणाम क्या होगा?** अच्छे–बुरे कार्यो से धन व सुख–सुविधा की सामग्री का संग्रह ही प्रायः हर व्यक्ति का जीवन–उद्देश्य बना हुआ है। शिक्षा आज एक व्यापार बन चुका है। जहाँ एक निर्धन पात्र व मेधावी बालक विद्यार्जन नहीं कर सकता। दूसरों की उन्नति की किसी को कोई चिन्ता ही नहीं है। अपने असत्य को छुपाने के लिए लोग नाना प्रकार से असत्य का सहारा लेने में संकोच नहीं करते और यहाँ तक कि झूठी कसमें भी खाते देखे जाते हैं। वेदों की प्रमुख बातें जिस कारण वह आज भी प्रासंगिक हैं और हमेशा रहेगें, आगामी पंक्तियों में प्रस्तुत हैं। वेदों में ईश्वर का सत्य स्वरूप वर्णित है। वह है– **ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है।**

शेष पृष्ठ 11 पर

www.thearyasamaj.org

'वसुधैव कुटुम्बकम्' के पीछे का सच

पण्डित विष्णु शर्मा के पंचतंत्र के "मूर्ख ब्राह्मण कथा" के पात्र की उक्ति

● हरिकृष्ण निगम

नोद टुथ बिहाइन्ड वसुधैव कुटम्बकम् : लेखक यशोधर्मा; (लेखक मानोज रखिल का ही यह उपनाम है); पृष्ठ–24; प्रकाशक 8–604, डिस्कवरी, दत्तपाड़ा मार्ग बोरिवली (पू) मुम्बई–40066, मूल्य अतिरिक्त 'वसुधैव कुटम्बकम्' नामक मात्र 24–पृष्ठों की हाल में प्रकाशित अंग्रेजी में चर्चित एवं प्रख्यात लेखक मानोज रखित की कृति का कलेवर यद्यपि लघु है पर इसने सामान्य पाठकों एवं विद्वतवर्ग दोनों को देश भर में आज उद्वेलित कर दिया है। श्री रखित जो 'यशोधर्मा' उपनाम से भी आज विवादो के केन्द्र में हैं जो हमें चौंका भी सकते हैं। आज यह भी टिप्पणी हो रही है कि मानोज रखित जैसे स्वतंत्र राष्ट्रवादी प्रखर चिन्तक से यह संभव है कि आप सहमत न हों पर उनके शोधपरक, प्रामाणिक और तथ्यपरक निरुपण की उपेक्षा नहीं कर सकते हैं।

हम सब इस देश में अरसे से प्रचलित 'वसुधैव कुटम्बकम्' के संस्कृत श्लोकांश या उक्ति से परिचित हैं और इस अवधारणा को अपनी मानसिक बुनावट का अंश मानते हैं। अपने देश में ऐसे प्रचुर, आलेख, टिप्पणियाँ हम सब पढ़ते रहे हैं जिसे हमारा हिन्दू समाज भी अपने स्वाभिमान का विषय मानता रहा है। हम इस अवधारणा का स्रोत वैदिक साहित्य को मानकर सारे विश्व को एक कुटुम्ब की तरह मानने पर गर्व करते हैं। यह धारणा हमारा विश्व को सर्वोतम अवदान है। तात्पर्य यह है कि हमारी उदारता और व्यापक दृष्टि सभी को अपने परिवार का हिस्सा मानती है, हमें अनूठा बनाता है और हमारी महानता की भी परिचायक है। अब तो जी.टी.वी. के एक प्रमुख चैनल ने विज्ञापनों के पहले या कार्यक्रमों के दौरान 'वसुधैव कुटुम्बकम्' को एक आकर्षक 'लोगो' की तरह इसे सारे दिन प्रदर्शित करना शुरु किया है।

'वसुधैव कुटम्बकम्' के अर्थ की सार्वजनिक समझ व छवि के विपरीत लेखक मानोज रखित ने उस पर संशय प्रकट किया और उनकी इस उक्ति के सन्दर्भ की खोज में भी दम है। 25 जनवरी 1952 में पश्चिमी बंगाल के बांकुरा जिले में प्रबंधन, मानव संसाधन विकास, विधि और संगणको के क्षेत्र में प्रशासकीय दायित्व के रूप में हजारों लोगो के साथ कार्य करने का अवसर मिला था। इन देशों में पाकिस्तान, श्रीलंका, ओमान, बहरीन, इजरायल, जापान, कोरिया फ्रांस, ब्रिटेन, न्यूजीलैण्ड, कनाडा और इण्डोनेशिया के देश भी शामिल हैं।

लेखक के अनुसार वसुधैव कुटुम्बकम् अपने को भ्रम में रखने वाली दुष्प्रचारित धारणा है। अपनी स्वप्रचारित महानता के नशे में हमें यह कहना भी उचित नहीं है कि इस उक्ति के मूल में वेद है। हिन्दू वैदिक साहित्य में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' वाक्यांश कभी किसी वैभवसूचक उदारमना अवधारणा के रूप में प्रचारित हुआ है। यह सत्य से परे है।

हिन्दुओं ने इस अवधारणा को कहाँ से लिया है और इसका सन्दर्भ क्या था? सच देखा जाए तो इस उक्ति के जनक थे तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व के 'पंचतंत्र' नामक कथा–संग्रह के रचयिता पण्डित विष्णु शर्मा। वे नीतिशास्त्र के महान आचार्य थे और उनकी कहानियाँ सदियों पहले दुनियाँ की अनेक भाषाओं में अनूदित की गईं थीं। विस्मय की बात यह है कि यह उक्ति उनकी "सिंह कारक मूर्ख ब्राह्मण की कथा" के सन्दर्भ में सर्वप्रथम कही गई थी। यह उस मूर्ख की रोचक कहानी है जो अपनी बेवकूफी को ढकने के लिए 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की बात गढ़ता है। इस पूरे आख्यान का निहितार्थ समझना जरूरी है।

हम संक्षेप में मूर्ख ब्राह्मण की कथा को जानना अपरिहार्य समझते हैं। एक गाँव में चार मित्र रहते थे जिनमें तीन अत्यन्त विद्वान और प्रतिष्ठित भी माने जाते थे। उन तीनों की तुलना में चौथा मित्र कहीं नहीं ठहरता था, पर वह चतुर और व्यवहार कुशल अवश्य था। पर एक बात सामान्य थी कि वे बचपन से ही एक साथ बड़े हुए थे और परस्पर मित्र थे। वे किसी न किसी रूप में महत्त्वाकांक्षी भी थे पर जानते थे कि छोटे से गांव में रहकर उनका विकास या उन्हें यश मिलना सम्भव न था। इसलिए उन्होंने यात्रा की ठानी और दूर के एक नगर गए। उनको लगा कि उन्हें वहाँ यश व कीर्ति मिल सकती है।

राह में उनमें से एक मित्र को शंका सता रही थी। उनमें से जो कुछ मंदबुद्धि था अथवा दूसरे तीनों की तरह बुद्धिजीवी या ज्ञानी नहीं था। उसको लक्ष्य कर उन तीनों ने कहा कि वह उनके साथ क्यों आ रहा है। "तुम कुशल और चतुर तो हो पर विद्या और उच्च स्तर के ज्ञान के अभाव में तुम्हारा अनुभवहीन होना बाधा है। इसलिए तुम घर लौट जाओ।" उससे यह कहा गया।

तीसरे मित्र के पास एक दूसरा ही तर्क था। उसने कहा हम लोग इस धरती या वसुधा पर एक कुटुम्ब की तरह रहते हैं। यदि मैं विद्वान न भी हूँ तो हूँ तो एक ही परिवार का। इसलिए मैं भी तुम्हारे साथ शहर में चलूँगा और जो भी कमाएँगे मिल बाँट कर खाएँगे।

इस तर्क–वितर्क के साथ वे सब शहर की यात्रा निकल पड़े। मार्ग में उन्होंने एक वन्य–पशु का कंकाल देखा जो काफी दिनों पहले मर चुका था। तीनों ने एक दूसरे की ओर देखा और मन बनाया कि उस चौथे मन्दबुद्धि वाले मित्र की परीक्षा ली जाए। तीनों पहले उस हिंसक जीव को जिलाने का यत्न करने लगे। उन्होंने पहले उस कंकाल के ढाँचे के फैले टुकड़ों को एकत्र कर शरीर के रूप मे ढाला और उसमें मांस, खाल व अंग–प्रत्यंग जोड़ा। तीसरे विद्वान मित्र ने सबसे कठिन कार्य जो प्राण डालने का था उसे एक श्लोक पढ़कर शुरु किया जो 'वसुधैव कुटम्बकम्' का था। उसके बाद चौथा कथित मन्दबुद्धि मित्र भी उनके साथ चलने लगा। अब इस साथी की व्यवहार–बुद्धि जैसे जाग उठी हो।

जब तीसरा मित्र उस मृत शरीर के एकत्रित अंगों के ढाँचे में प्राण फूँकने की तैयारी कर रहा था, चौथा मित्र बोल उठा "रुको! ऐसा मत करो! यदि वह जीवित हो गया तो वह हम सबको खा जाएगा" उसके तर्क पर तीनों मित्र हँस दिए। तब चौथा यद्यपि मंद–बुद्धि पर व्यवहार–कुशल मित्र तुरन्त निकट के एक वृक्ष पर चढ़ गया बाकी तीनों विद्वान–मित्र 'वसुधैव कुटम्बकम्' की भावना से साथ रहे।

अब अनुमान लगाएं कि आगे क्या हुआ होगा? तीनों विद्वान मित्रों ने उस हिंसक पशु के कंकाल में जान डाल दी। अपनी सफलता पर तीनों मित्र उन्मत्त और हर्षित होने लगे। वे आश्वस्त थे कि उनकी विद्वता व ज्ञान उच्च स्तर का था। उसी समय मृत जानवर ने अंगड़ाई ली जैसे वह लम्बी नींद से उठा हो। वह भूख से भी पागल था। उसने तीनों मित्रों को तुरन्त मारकर अपनी भूख मिटाई व जंगल में भाग गया। दुख की बात यह थी कि चौथा कम ज्ञानी मित्र पेड से उतरकर गाँव लौट गया और यह आपबीती सुनाने के लिए ही वह बचा था।

पंचतंत्र के इस रोचक आख्यान ने यह सिद्ध कर दिया कि हम भारतीयों द्वारा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की प्रचारित उक्ति का सन्दर्भ या स्रोत न तो वैदिक साहित्य है और नहीं कोई पौराणिक गाथा। इस दिग्भ्रमित अवधारणा का स्रोत 'अपौरुषेय' वेदों को कहना श्रेयस्कर नहीं है। इसके रचयिता पण्डित विष्णु शर्मा ने इसको उदार दृष्टि वाली बुद्धि न कहकर 'मूर्खता' की संज्ञा, अपनी कथा के पात्रों के माध्यम से दी। इसे उनकी मूर्खता के उदाहरण के संदर्भ में रचा गया था।

लेखक एक प्रश्न उठाता है– क्या आज की गलाकाट धार्मिक प्रतिद्वन्द्विता व भागती दौड़ती दुनिया में 'वसुधैव कुटम्बकम्' की रट लगाने वालों को 'सिंह कारक मूर्ख ब्राह्मण' कथा के सन्दर्भ में परले दर्जे का मूर्ख नहीं कहा जा सकता है। इसके समर्थक स्वतंत्र चिन्तन व दूरदर्शिता के अभाव में आज भी वैसी दृष्टि को अपनाने के लिए कदाचित अभिशप्त हैं। श्री मनोज रखित ने इसे उन अनेक ईसाई और ब्रिटिश धोखाधड़ी या 'फ्राड' के मकड़जाल के उदाहरणों में से एक माना है जो हिन्दुओं के विरुद्ध एक सुनियोजित साजिश के तहत बुना गया था। पढ़ने लिखने के बाद भी आज के हिन्दुओं में आत्मसम्मान की कमी या ऐसी हीनता गंथि को बढ़ावा दिया गया है कि चाहे चर्च के मिशनरी हमारी दृष्टि के किसी पक्ष को अपने दूरगामी लाभ के लिए प्रशंसित करें हम सब भूल कर उत्तेजित हो जाते हैं और जब वे हमारे कथित सामाजिक व्यवहारों या जड़ों की भर्त्सना करते हैं तब उसे भी सदाशयता मानकर सही मानने लगते हैं। हमको उनके एजेन्डा की गहराई के बारे में काफी समय बाद ही पता चलता है। यह आज की पीढ़ी की नई सोच है जो पश्चिम का बड़े उत्साह से अनुकरण करती है, अनेक महत्त्वहीन व अप्रासंगिक विषयों पर भी। मायावी व्यक्तित्व की विशेषता यह होती है कि जो बहुधा दीखता है, वह सत्य नहीं होता और जो दृष्टिगत नहीं होता है, वह छिपा सत्य होता है।

'वसुधैव कुटुम्बकम्' का संदर्भ पंचतंत्र की कथा के उस पात्र से सीधा जुड़ा है जो मूर्खों की दुनियाँ में विचरण कर यथार्थ से कट जाता है और जीवन के मौलिक सत्य को तात्कालिक प्रचारतंत्र के दबावों के कारण अनदेखा कर देता है। लेखक का विश्वास है कि यदि हमें समय का ज्ञान होता तो हमारी सोच ही बदल सकती थी। आज के हमारे नेता, मीडिया के कर्णधार और टी.वी. चैनलों पर छाए कथित 'गुरू' और अन्तहीन बहसों के संचालक भी ईसाई शिक्षा पद्धति की ही पैदावार दीखते हैं। इस लघु पुस्तिका की संप्रेषणीयता, पठनीयता व प्रभावोत्पादकता में कोई सन्देह नहीं है, इसलिए यह संग्रहणीय है।

ए–1002 पंचशील हाइट्स
महावीर नगर, कान्दिवली (9)
मुम्बई–400067
दूरभाष28606451

www.thearyasamaj.org

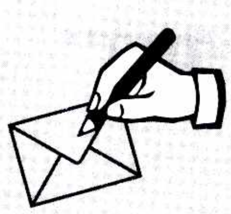

पत्र/कविता

भारत के नर-नारी जागो

भारत को नर–नारी जागो। मिलकर जोर लगाओ।
अपने प्यारे आर्य वर्त को दुनिया में चमकाओ।।
सारी दुनियां का स्वामी था, आर्यावर्त हमारा।
सोने की चिड़िया भारत को ,कहता था जग सारा।।
चरितवान् ईमानदार थे, भारत के नर–नारी।
किसी चीज की कमी नहीं थी, खुश थी जनता सारी।।
याद करो पुरुखों का गौरव मानवता अपनाओ।
अपने प्यारे आर्यवर्त को दुनिया में चमकाओ।।
शासक थे ईमानदार सच्चे ईश्वर विश्वासी।
शाम सवेरे प्रभु भजन, करते थे भारतवासी।।
घर–घर में होते हवन, करते थे गो की सेवा।
विद्वानों की सेवा कर, पाते थे पावन मेवा।।
सुख पाओगे देशवासियो! ईश भक्त बन जाओ।
अपने प्यारे आर्यवर्त को दुनिया में चमकाओ।।
ऋषियों की धरती पर फिरते पापी मांसाहारी।
हत्याएं कर रहे रात–दिन मद्यप–अत्याचारी।।
नित्य हजारों की संख्या में गऊएं जातीं मारी।
नहीं दिखते चंद्रगुप्त अरु, पोरु से बलधारी।।
राम कृष्ण, लक्ष्मण बनकर, दुष्टों का वंश मिटाओ।
अपने प्यारे आर्यवर्त को दुनिया में चमकाओ।।
देश भक्त ईमानदार जो, मानव परोपकारी।
दुखी जनों का मददगार जो, वेदों का प्रचारी।।
जो दुष्टों का करे सामना कभी नहीं घबराता।
ईश्वर भक्त सदाचारी रह, नेता माना जाता।।
धर्मवीर का साथ निभाओ जग में नाम कमाओ।
अपने प्यारे आर्यवर्त को दुनिया में चमकाओ।।
समय जागने का है वीरो! अंगडाई लो, जागो!
करो परस्पर मेल साथियो! भेद–भाव को त्यागो।।
देश–भक्त बलवानों का, करता सम्मान जमाना।
दुनियां में आदर पाता है, धीर–वीर मर्दाना।।
''नन्दलाल ''शुभ कर्म करो तुम, जीवन भर सुख पाओ।
अपने प्यारे आर्यवर्त को दुनिया में चमकाओ।।

पं नन्दलाल निर्भय, भजनोपदेशक पत्रकार
आर्यसदन, बहीन, जनपद पलवल (हरियाणा)

''विभाजन के कारण आज भी वैसे ही हैं''

कनाडा से आया एक पत्र'

भारत से बाहर पाश्चात्य एवं पौर्व्य देशों की यात्राएं जितनी बार कीं उतनी ही बार उनकी भौतिक उन्नति समृद्धि, ऐश्वर्य और उसके कारणों–पुरुषार्थ, लगन, अनुशासन, दायित्व निर्वहन, त्याग, तपस्या, दण्ड व्यवस्था, समय का परिपालन, सुप्रबन्ध, राष्ट्रहितप्रेम दूरदर्शिता आदि को देख–सुनकर अन्तः करण प्रफुल्लित हो जाता है। वैदिक आध्यात्मिक सिद्धान्तों, जिनसे ये प्रायः अनभिज्ञ हैं, उनको छोड़ देवें, किन्तु जीवन को अत्यन्त प्रतिकूल परिस्थितियों में भी कैसे उत्तम रीति से सुन्दर–सुव्यवस्थित जिया जाये, यह बात हमारे लिए स्तुत्य, प्रेरक तथा अनुकरणीय है।

कहने को तो हमारे पास आज उच्च स्तर का आध्यात्मिक गूढ विज्ञान है–जिसको व्यवहार में लाने से जीवन में परम शान्ति, आनन्द सन्तोष, स्वतंत्रता निर्भीकता मिलती है किन्तु आज वह विज्ञान मात्र पुस्तकों में ही रखा है या मंच पर कहने व सुनने तक सीमित रह गया है। या फिर इस विज्ञान का मुखौटा बनाकर भोली भाली जनता को भ्रमित करके एषणाओं की पूर्ति की जा रही है, निर्मल बाबा इसका ज्वलन्त उदाहरण है। राष्ट्र की राजनैतिक धार्मिक चारत्रिक नैतिक व्यावहारिक पतन की पराकाष्ठा की स्थिति को, सभी क्षेत्रों में कार्यरत बुद्धिजीवी न जानते हों ऐसा नहीं है, किन्तु व्यक्तिगत धन, पद, प्रतिष्ठा से सम्बन्धित स्वार्थ अहंकार हठ, दुराग्रह के कारण जानते हुवे भी निष्क्रय बैठे हैं, बल्कि जो कुछ आदर्श, सत्य, न्याय युक्त बातों को स्थापित करने के लिए प्रयास कर रहे हैं, उनकी प्रशंसा, समर्थन सहयोग करने की बात तो दूर रही, उनको अपना विरोधी, शत्रु मानकर येन केन प्रकारेण उन पर मिथ्या आरोप लगाकर, उनको गिराने बदनाम करने यहाँ तक कि उनको जेल भिजवाने और उनकी हत्या करवाने तक का हर प्रकार से षड्यंत्र करते हैं। अन्ना हजारे, बाबा रामदेव आदि अनेक उदाहरण हमारे समक्ष हैं। निश्चित रूप से यह राजनैतिक स्थिति, धन, सत्ता, बुद्धि और शक्ति का दुरुपयोग है, जो कालान्तर में भयंकर दुष्परिणामों को उत्पन्न करने वाली है तथा क्रान्ति को उत्पन्न करने वाली है।

धर्मनिरपेक्षता, सर्वधर्मसमभाव, अनेकता में एकता शब्द सुनने पढ़ने को अच्छे लगते हैं किन्तु सूक्ष्मता से गहराई में जाकर देखें तो पता चलेगा कि सम्पूर्ण इतिहास यह बताता है और वर्तमान में प्रत्यक्ष हम देख सकते हैं कि यह सिद्धान्त व्यवहार में पूरा कभी नहीं उतरा, न उतर रहा है। 20वीं शताब्दी के विश्व इतिहास में किसी एक ही देश में सबसे भयावह, क्रूर हिंसक घटना भारत वर्ष में घटित हुई । भाई–भाई कहलाने वाले, साथ रहने वाले दो भिन्न धर्मानुयायियों का प्रेम, विश्वास, श्रद्धा, सौहार्द, भाईचारा, सम्बन्ध सब झूठा सिद्ध हो गया। सारे देश के एक पक्षीय समुदायों के न चाहते हुये भी, लाख प्रयत्न करने पर भी विभाजन को रोक न सके। लाखों परिवार बेघर बार हुये, भयंकर कत्ले आम हुआ, लूट खसोट, बलात्कार हुये और लाखों विधवाएं बनीं, बच्चे अनाथ हुये, बलात् धर्मपरिवर्तन किया गया, न जाने क्या–क्या हुआ, पढ़ सुन कर शरीर में रोंगटे खड़े हो जाते हैं। लाखों करोड़ों के मालिक, अगस्त 47 में पंजाब, दिल्ली, राजस्थान आदि प्रान्तों में रोड़पति बन गये, दो रोटी के लिए हाथ पसारे सड़को के किनारे, गरदन नीची किये देखे गये। दिल दहल जाता है उसे याद करके।

विभाजन के जो कारण, उस समय थे, वे आज भी वैसे ही हैं। कैंसर को जड़ मूल से न नष्ट किया जाये तो फिर उभर जाता हैं। मूल–जड़–नहीं उखड़ती है तो फिर कीकर थोर उभर जाता है। जिन व्यक्तियों के उद्गम स्थान बाहर हैं, देवी देवता, धर्म गुरु, तीर्थ स्थान, धर्मबन्धु बाहर हैं। जो राष्ट्रगीत, राष्ट्रभाषा, राष्ट्रध्वज, राष्ट्रसंविधान, राष्ट्रीय संस्कृति, आदर्श परम्परा सिद्धान्त के प्रति श्रद्धान्वित नहीं हैं, इन की आवमानना करते हैं, हंसी उड़ाते हैं, वे कैसे राष्ट्र प्रेमी बन सकते हैं। जो अपने मत को सर्वोच्च दर्शाने के लिए कुछ भी करने को तत्पर हैं चाहे वह आतंकवाद हो या उग्रवाद, उनसे धर्मनिरपेक्षता आशा हमारे राजनेता, धर्मनेता, धन नेता, अभिनेता, टी.वी.नेता रक्षा नेता आदि क्यों लगाये बैठे हैं?

चीन या पकिस्तान के हमलों से हम मुकाबला करने में सक्षम हो भी जायें किन्तु जो घर में ही जयचन्द म्पी विद्राही बैठे हैं, वहां कौन सी सेना या पुलिस सामना करेगी? औवेसी जैसों की रोकने का क्या उपाय है? संविधान, पुलिस, नेता, इन दुराग्रही, हठी अन्याय–पक्षपात पूर्ण बातों को मनवाने के लिए मरने को तैयार हैं, कैसे रोकेंगे। या तो जैसा वे चाहते है, वैसा सहने के लिए हम तैयार हो जायें या फिर संघर्ष के लिए या फिर नये देशों की स्थापना के लिए, देश के टुकड़े करने के लिए, ''**नान्य पन्था विद्यते अयनाय**'' हे ईश्वर हमें बुद्धि, शक्ति, साहस, पराक्रम, ओज प्रदान करो जिससे हम इस अवश्य भावी घटना का सही, सफल समाधान निकालने हेतु अभी से ही समर्थ हो जायें।

ज्ञानश्वरार्य:
आर्य समाज, मिसीसऊगा
कनाडा

****

गरीब का प्याज

● हीरा लाल आर्य

मनुष्य के जीवित रहने के लिए तीन वस्तुओं की आवश्यकता है; हवा, पानी, और भोजन। हवा और पानी तो आवश्यक है ही किन्तु शरीर की निरोगता एवं पुष्टि के लिए भोजन की आवश्यकता निरन्तर रहती है। भोजन में हम खाद्य–सामग्री का उपयोग करते हैं। इनमें गेहूँ, चावल, जौ, मक्का, ज्वार बाजरा, घृत, दूध, दही, तेल, विभिन्न प्रकार के फल और सब्जियाँ खाद्य सामग्री के अन्तर्गत आते हैं। भोजन और सब्जी को तैयार करने में नमक, हल्दी, मिर्च, धनिया आदि मसालों का उपयोग करते हैं। सब्जियों को स्वादिष्ट बनाने के लिए गर्म मसाले–लौंग, काली मिर्च, हींग, जीरा, अदरक, लहसून, प्याज आदि का प्रयोग करते है। ये मसाले भोजन को स्वादिष्ट तो बनाते ही हैं, किन्तु आर्युवैदिक दृष्टि से स्वास्थ्य के लिए भी काफी हितकर है। प्याज का उपयोग रसोई का आवश्यक अंग है। सामान्य तौर पर सभी मनुष्य इसका उपयोग करते हैं। शरीर की कई बीमारियों में भी प्याज का उपयोग किया जाता है। जैसे– मोतिया बिंद, नामर्दी, मधु–मक्खी/ततैया काटने पर, जलने पर, और पेट के कीड़े आदि में।

भारत कृषि प्रधान देश है। यहाँ 80 प्रतिशत किसान व अन्य लोग कृषि पर निर्भर हैं। उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर होने से विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ नहीं खरीद सकते। वे प्रतिदिन प्याज, चटनी या छाछ से ही रोटी खाकर पेट भर लेते हैं। कभी कभी तो प्याज छीलकर रोटी पर रखकर ही बड़े शौक से भोजन कर लेते है। अतः हम कह सकते हैं कि प्याज गरीब का भोजन है। भारत की अधिकतर आम जनता प्याज का उपभोग प्रतिदिन करती है।

आज कमर–तोड़ मँहगाई पूरे देश में है। इसका प्रभाव अमीर व गरीब सभी व्यक्तियों पर है। अमीर तो फिर भी मँहगे पदार्थ खरीद सकते हैं। किन्तु गरीब व्यक्ति के लिए दैनिक उपभोग की वस्तुएँ खरीदना भी दुष्कर है।

आज देश में भ्रष्टाचार चारों ओर व्याप्त है। सरकारी तन्त्र भी अछूता नहीं है। जनता के प्रतिनिधि माने जाने वाले राजनेता मंत्रीगण भी भ्रष्टाचार में आकण्ठ डूबे हुए हैं। फिर शासन तन्त्र स्वच्छ छवि वाला कैसे हो सकता है। मँहगाई व भ्रष्टाचार आज नियन्त्रण के बाहर हो गई है। शासन तन्त्र का कोई अंकुश नहीं है।

लहसुन, प्याज व आलू जैसी सामान्य वस्तुओं के भाव भी आकाश छूने लगे हैं। ऐसा क्यों? इसके पीछे उपज का कम होना मुख्य कारण नहीं है। इसमें व्यापारियों, कारोबारियों, जमाखोरियों का बड़ा षड्यंत्र होता है। ये लोग वस्तुओं का निर्यात करके अथवा जमा करके कृत्रिम मँहगाई को बढ़ावा देते हैं। सरकार का इन लोगों पर नियन्त्रण नहीं है।

इन दिनों हम देख रहे है कि बाजारों में प्याज के भाव 60–70 रुपये प्रति किलो बि रहे हैं। हमारे देश की राजधानी दिल्ली में भी प्याज 80–90 रुपये प्रति किलो बिकने लगा है। गरीब व मध्यम वर्ग के लोग प्याज खरीदने से वंचित हो गए हैं। इसे सरकार का कुप्रबन्ध ही करना चाहिए। इससे जनता सुखी कैसे रह सकती है। देश के कृषि मंत्री यह कहते हैं कि वर्षा से फसल खराब होने व उत्पादन कम होने से प्याज की कमी आई है। यह कथन पूर्णतया असत्य है। यह कृत्रिम मंहगाई है जो जमाखोरों। कारोबारियों द्वारा उत्पन्न की गई है। ये लोग सरकार से मिले हुए है। ऐसे समय सरकार ने निर्यात भी किया है। इन्हीं कारणों से बाजार में प्याज की कमी आई है और प्याज के भाव एकदम बढ़े हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि कभी लहसुन के भाव तो कभी प्याज के भाव और कभी आलू के भाव एक दम बढ़ जाते है। इसका समस्त उत्तरदायित्व सरकार के ऊपर ही है। जनता को सुख–सुविधा देना सरकार का कर्त्तव्य ही है।

इस महत्वपूर्ण समस्या का हल यही है कि सरकार जमाखोरों/व्यापारियों/कारोबारियों के खिलाफ शक्त कार्यवाही करें तथा दोष सिद्ध होने पर उन्हें दण्डित भी किया जाय। देश की आवश्यकता से अधिक उत्पादन होने पर ही प्याज या अन्य वस्तुओं का निर्यात किया जाय। अन्यथा नहीं। आम जनता को भी जागरूक होकर ऐसे जमाखोरों की सूचना सरकार को देनी चाहिए जिससे तत्काल कार्यवाही हो सके। आवश्यकता पड़ने पर सरकार को बाहर से आयात की करना चाहिए जिससे भव नियन्त्रण में रहे।

'सूर्य निवास' नई आबादी
कुण्ड गेट बाहर, श्मशपुरा
जिला–भीलवाड़ा (राज.)

☞ पृष्ठ 8 का शेष

वेद आज भी प्रासंगिक....

उसी की उपासना करने योग्य है। इसके अतिरिक्त वेदों का सिद्धान्त यह भी है, जो कि वैज्ञानिक तथ्य को उद्घाटित करता है, 'सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदिमूल परमेश्वर है।' ईश्वर इस संसार का पालनकर्ता व प्रलयकर्ता है। वह सभी जीवात्माओं के जन्म–जन्मान्तरों के क्रियमाण–संचित–प्रारब्ध कर्मों के अनुसार फल देता है। जीवों के सुख व कल्याण के लिए ही उसने इस संसार या ब्रह्माण्ड की रचना की है। ईश्वर का इस प्रकार का सत्य स्वरूप संसार के किसी मत–पन्थ व मजहब के ग्रन्थ में नहीं है। यही कारण है कि पश्चिमी देशों के विचारशील लोग व वैज्ञानिक उन–उन देशों में प्रचलित धर्म व पन्थों में विद्यमान ईश्वर के कल्पित स्वरूप को नहीं मानते। मनुष्य किस ईश्वर की उपासना करे, तो वेदों के अनुसार ईश्वर के वेद वर्णित स्वरूप का ध्यान करते हुए उपासना करनी चाहिए। वेदों में सब प्रकार आध्यात्मिक व भौतिक व अन्य ज्ञान है। ईश्वर भक्ति की सही विधि वेदों से ज्ञात होती है। **यह सत्य है कि वेदों पर सारी दुनिया के सभी लोगों का समान अधिकार है। यह किसी एक वर्म, जाति व देश की बपौती नहीं है।**

वेद बताते हैं कि ईश्वर हमारी माता, पिता, बन्धु, मित्र व सुहृद सहयोगी की भाँति है। ईश्वर व जीवात्मा का सम्बन्ध नित्य, सनातन व शाश्वत है। **ईश्वर ही हमारा राजा है, हम उसकी प्रजा हैं यह भी वेद ही हमें बताते हैं। वेद से ज्ञात होता है कि हमारा जन्म पूर्व जन्मों में किए गए कर्मों के फल भोगने के लिए हुआ है। हमारा अगला जन्म बचे हुए कर्मों व नए कार्मों के आधार पर होगा। अच्छे कर्मों को करने से हमारी उन्नति होगी व बुरे कर्मों के करने पर हमें निम्न कीट, पतंग, पशु, पक्षियों व वृक्ष आदि की योनियाँ प्राप्त होंगीं। यह बात काल्पनिक नहीं अपितु तर्क के आधार पर सर्वथा सत्य व प्रामाणिक है। कर्म बिना भोगे समाप्त नहीं हो सकते।** कर्म–फल को जानकर ज्ञानी मनुष्य अनैतिक कार्यो का त्याग कर समाज के हित के कार्य करता है। वेदों से हमें अपनी दिनचर्या का ज्ञान भी होता है। वेद बताते हैं कि सभी जीव एक समान हैं। कोई छोटा–बड़ा या ऊँचा–नीचा नहीं है। वेदों को पढ़ने व प्रचार करने का सबको बराबर अधिकार है। स्त्री व शूद्रों अर्थात् अशिक्षितों को भी वेद ज्ञान प्राप्त कर सबके समान उन्नति का अवसर देता है। वेद की शिक्षा है कि सभी प्राणियों में स्वयं को और स्वयं में अन्य प्राणियों को देखो जिससे तुम्हारा शोक व मोह समाप्त होकर स्थिर सुख की अनुभूति हो सके। इस ज्ञान को न पाकर मनुष्य सदैव संशय की स्थिति में पड़ा रहकर दुःखी रहता है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की वैदिक भावना भी वेद की देन है, जो अन्यत्र देखने में नहीं मिलती। दुःख है कि आज भी अनेक मजहब व सम्प्रदाय धर्मान्तरण की गुप्त योजना बना कर व प्रलोभन देकर लोगों का धर्मान्तरण करते हैं। वेदेतर शिक्षाओं के कारण लोग भोगों में लिप्त रहते हैं जिससे वह रोगी व अल्पायु हो रहे हैं। वेद का यह लाभ भी है कि वह भोगों को सीमित कर रोगों व क्लेशों से बचाता है। समानता पर आधारित नया विश्व, जिसमें कोई किसी का शोषण न करे, किसी के साथ अन्याय न हो, सब एक दूसरे को आगे बढ़ाएँ, इस स्वप्न को वेदों की शिक्षाओं को अपनाकर ही सत्य सिद्ध किया जा सकता है। प्रजातन्त्र, समाजवाद, साम्यवाद, अधिनायकवाद आदि सभी वादों को आजमाया जा चुका है, अब वेद की शिक्षाओं के अनुरूप समाज का निर्माण कर विश्व शान्ति के लक्ष्य को पूरा करने की बारी है। वेद यह भी बताता है कि राजा को पिता के समान प्रजा का पालन करना चाहिए और प्रजा राजा को पिता मानकर उसकी आज्ञाओं का पालन करे व सहयोग करे। **वेद की शिक्षाओं पर चलकर सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करते हुए यश व कीर्ति के साथ मृत्यु के पश्चात मनुष्य मोक्ष, अपवर्ग या निःश्रेयस प्राप्त करता है जो अन्य मत–मतान्तरों से कदापि प्राप्त होने वाला नहीं है।** अन्य मत व सम्प्रदाय जिस कल्पित स्वर्ग का चित्रण करते हैं वह तर्क से भी सिद्ध नहीं होता, अतः मिथ्या है। वेद पर्यावरण सुरक्षा की शिक्षा भी देता है। यज्ञ वेदों की एक विशिष्ट देन है जिससे आत्मोत्थान व अदृष्ट फल के साथ पर्यावरण को लाभ होता है। **यज्ञ को सारे संसार का केन्द्र व नाभि बता कर वेद कहता है कि सारी विश्व की समस्याएँ यज्ञ की भावना से हल की जा सकती है।** वेद को अपना कर सभी व्यक्तिगत, सामाजिक, राष्ट्रीय व अन्तरराष्ट्रीय समस्याओं का समाधान ढूँढा जा सकता है। इससे स्पष्ट होता है कि वेद आज भी प्रासंगिक, सार्थक, उपयोगी व मनुष्यमात्र के लिए अपरिहार्य हैं।

196 चुक्खूवाला–2, देहरादून

www.thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 04-05 /12/2013
रजिस्ट्रेशन नं. आर0 एन0 आई0 39/57

चौराहे पर खड़े होकर बेचे ''सत्यार्थ प्रकाश''

कोटा महानगर के भीड़ भरे चौराहे– चौपाटी बाजार में आर्य समाज जिला सभा कोटा के पदाधिकारियों ने 500 पृष्ठों का 50 रू. कीमत का सत्यार्थ प्रकाश मात्र रू. 10/– में आवाज़ लगा–लगाकर बेचा।

आर्य समाज जिला सभा के प्रधान अजुनदेव चड्ढा माइक से सत्यार्थ प्रकाश की विशेषताएं बता रहे थे। ईश्वर का सच्चा स्वरूप, ईश्वर के नामों की व्याख्या, समस्त मत मतान्तरों की विवेचना, आश्रम व्यवस्था आदि सत्यार्थ प्रकाश में हैं। इससे प्रभावित होकर मुस्लिम, सिख, छात्र– महिलाएं लाइन लगाकर सत्यार्थ प्रकाश खरीद रहे थे।

इस अवसर पर आर्य समाज विज्ञान नगर के प्रधान जे.एस.दुबे, आर्य समाज रेलवे कॉलानी के प्रधान कैलाश बाहेती, आर्य समाज गायत्री विहार के प्रधान अरविन्द पाण्डेय, आर्य समाज तलवण्डी के रामप्रसाद याज्ञिक, चन्द्रमोहन कुशवाहा यह सभी वहाँ उपस्थित जनसमुदाय को सत्यार्थप्रकाश की विशेषता बता रहे थे। आमजनों ने आर्य समाज के इस पवित्र कार्य की प्रशंसा की।

श्री गुरू जम्भेश्वर डी.ए.वी. हरिपुरा में हुआ रक्त दान शिविर का आयोजन

श्री गुरू जम्भेश्वर डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, हरिपुरा में रोटरी क्लब, श्री गंगानगर व तपोवन ब्लड बैंक, श्री गंगानगर के तत्वाधान में एक रक्त दान शिविर का आयोजन किया गया। इस अवसर पर श्रीगंगानगर स्थित तपोवन ब्लड बैंक द्वारा डॉक्टर्स एवं स्टॉफ की एक टीम भेजी गयी। विद्यालय के अध्यापकों, वैन चालकों एवं परिचालकों ने इस अवसर पर 30 यूनिट रक्त दान किया।

गौरतलब है कि प्रत्येक रविवार को थैलमिया रक्त कैन्सर से ग्रस्त बच्चों को यह रक्त निःशुल्क दान दिया जाता है। विद्यालय के चैयरमेन सरदार बलबीर सिंह दानेवालिया जी एवं प्राचार्य श्री आर. के. बधवा के संरक्षण एवं देखरेख में इस शिविर का आयोजन किया गया। उन्होंने ऋषियों के जीवन से प्रेरणा लेकर मानव कल्याण का ध्येय प्राप्त करने का आह्वान किया।

डी.ए.वी. नाहन ने गो सेवा करके मनाया निर्वाण दिवस

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के निर्वाण दिवस के अवसर पर आर्य युवा समाज नाहन द्वारा डी.ए.वी. पब्लिक विद्यालय नाहन के शिक्षकों व विद्यार्थियों सहित माता बाला सुन्दरी गोशाला सेवा सदन जाकर गायों की सेवार्थ, धनराशि दान में दी गई। सदन के कर्मचारियों ने विद्यार्थियों को गाय की महता और गायों को रखने, देखरेख किए जाने वाले कार्यों की विस्तृत जानकारी दी'।

विद्यार्थियों को गायों को रखने एवं वर्तमान समय में कैंसर जैसी भयंकर बीमारियों के गोमूत्र द्वारा उपचार की विधियाँ बतायीं और गाय के गोबर द्वारा बनाई जाने वाली वर्मी खाद, कीटनाशक व बायोगैस सयंत्र (प्लांट) के बारे में जानकारी दी गई। गोशाला में लगाए गए एलोविरा पौधे की उपयोगिता, तथा जल संरक्षण के विषय से संबन्धित जानकारियाँ दी गईं।

गोशाला सेवा सदन की ओर से ''आर्य युवा समाज'' द्वारा किए गए इस सराहनीय कार्य की हार्दिक प्रशंसा की गई।

डी.ए.वी. नाभा में विज्ञान प्रदर्शनी का आयोजन हुआ

डी.ए.वी सैंट. पब्लिक सीनीयर सैंकडरी स्कूल, नाभा में विद्यालय परिसर में विज्ञान प्रदर्शनी का आयोजन हर्षोल्लास के साथ किया गया। इस अवसर पर विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती मंजुला सहगल जी ने मुख्यातिथि के रूप में एस.डी.एम, श्रीमती अमरवीर कौर भुल्लर (पी.सी.एस.) को सादर आमंत्रित किया। विशेष अतिथि के रुप श्री विजय कुमार जी, क्षेत्रीय निदेशक पटियाला एवम् फिरोजपुर जोन एवम् श्रीमती रजनी को सादर आमंत्रित किया गया।

प्रधानाचार्या ने मुख्यातिथि विशेष अतिथि व अन्य सभी अतिथिगणों का अभिनंदन किया जिसके पश्चात् मुख्यातिथि श्रीमती अमरवीर कौर भुल्लर जी ने गुब्बारे उड़ाकर प्रदर्शनी एवम् दीवाली मेला का उद्घाटन किया।

इस समारोह में मुख्य रुप में विज्ञान सामाजिक विज्ञान गणित एवम् हस्त कला व शिल्प कला की प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। जिसमें 350 छात्रों ने बढ़ चढ़ कर भाग लिया।

मुख्यातिथि ने समारोह पर आयोजित विभिन्न प्रदर्शनियों एवम् दीवाली मेला के आनंद उत्सव की भूरि–भूरि सराहना की।

स्कूल की प्रधानाचार्या श्रीमती मंजुला सहगल जी ने बताया कि इस प्रकार की प्रदर्शनियों के आयोजन करने का मुख्य उद्देश्य छात्रों के अंदर छिपी प्रतिभा को निखारते हुए उन्हें जीवन में उस क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करना है।

अन्त में प्रधानाचार्या जी ने मुख्यातिथि विशेष अतिथि व अन्य सभी अतिथिगणों का हार्दिक धन्यवाद किया।

मुद्रक व प्रकाशक – **श्री प्रबोध महाजन**, सभा मंत्री द्वारा **मदन गोयल** के प्रबंध में **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.**, डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 से प्रकाशित। स्वामित्व – आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक – **श्री पूनम सूरी**